तेवरी-पक्ष-७

(जन जागरण की विचार प्रधान त्रैमासिकी)

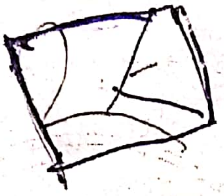

संरक्षक-रामचरन गुप्त

संपादक-रमेशराज

वर्ष ६ अंक १ मूल्य ३ रु० जुलाई-सित. ८८

Scanned by CamScanner

मेरा शत्रु अभी जीवित है

मेरे पास कोई पैसा नहीं है
जबकि लोग खुशियाँ मना रहे हैं।
मेरे बच्चे बिलखते हैं
मैं अपनी पत्नी को क्या दूं ?
भेंट (अधिकारियों को) देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं
मेरे सम्बन्धी अपने धन-दौलत के मद में मस्त हैं
धनवान लोग मुझसे घृणा करते हैं
और मुझे पास भी नहीं बैठने देते।
आज मेरे घर में
घी, तेल, नमक, ईंधन, कपड़ा
कुछ भी नहीं हैं
मिट्टी का बर्तन खाली पड़ा है
कल मेरे परिवार का क्या होगा ?
लड़की सयानी हो रही है
लड़का बहुत युवा है, और धन नहीं कमा सकता
परिवार के लोग बीमार हैं और—
मेरे पास दवाई के लिये कोई पैसा नहीं है
धर्मपत्नी नाराज है
कई मेहमान घर आए हैं
क्या मैं कहीं और चला जाऊँ ? मैं क्या करूँ ?
मैं किस समुद्र में डूब मरूँ ?
क्या मैं धरती के दूसरे छोर पर चला जाऊँ ?
मैं क्या उपाय करूँ ?
मैं किस पूजा पद्धति
अथवा साधन का प्रयोग करूँ ?
अथवा मैं किस देवता की आराधना करूँ ?
मेरा शत्रु अभी जीवित है
मेरा भगवान मेरे विरुद्ध है
धनी लोग अपना धन लौटाने के लिये कहते हैं।
मैं कहाँ जाऊँ ? मैं कहाँ जाऊँ ?

—:०:—

सृजन काल—ग्यारहवीं शताब्दी

कवि—मालाधारी हेम चन्द्र सूरी

तेवरीपक्ष-7 पृ०1

Scanned by CamScanner

मार्च

कविता का उपयोग यदि मनोरंजन मात्र, प्रेमिका का चांदनी रात में विहंसन, चुम्बन, आलिंगन, या भाटों की जमात में शरीक होकर अय्याशों का प्रशस्तिगान है तो ऐसी कविता या कवि की तथाकथित प्रेमालाप की टीस को मेरा दूर से ही प्रणाम और एक सलाह भी कि वे अपने दृष्टिकोण और समझ साफ करें तथा कविता को युग की सच्चाइयों से जोड़ें, नहीं तो हजारी प्रसाद द्विवेदी की तरह हमें भी कहना पड़ेगा—"भाव सीधे हृदय से निकलते हैं और श्रोता पर सीधे चोट करते हैं, जो लोग इस रहस्य को नहीं जानते वे व्यर्थ ही प डित्य प्रदर्शन से पाठकों का समय नष्ट करते हैं। सीधी बात को भी ललकारने की भाषा में बोलने वाले को ऐसे पंडित कवि का दम्भ या घमंड मानकर आश्वस्त होते हैं तो होते रहें।" क्योंकि मुक्तिबोध के अनुसार—"सौन्दर्यवादी लोग ये भूल जाते हैं कि बंजर काले स्याह पहाड़ में भी एक अजीब वीरान भव्यता होती है...... अँधेरे में उगे जंगली पौधे में भी एक विचित्र संकेत होता है, पर अफसोस यह है कि विशाल व्यापक मानव जीवन में पाये जाने वाले भयानक संघर्ष के रौद्ररूप से सौन्दर्य अभिरुचि के लोग कतराते रहे हैं।"

इतिहास साक्षी है—उसी कवि की कविता शास्वत और प्रासंगिक रह पायी है, जिसने जीवन की सच्चाइयों से कतराकर प्रकृति–चित्रण या व्यक्तिगत प्रेमालाप में मानवीय समस्याओं के हल नहीं खोजे, बल्कि जीवन की त्रासदियों से मानव को साक्षात्कार कराते हुए उनके निर्मूलन हेतु जूझी-लड़ी है। और अन्तत: आदमी को वैचारिक क्रान्ति के लिये प्रेरित किया है। क्योंकि अज्ञेय के अनुसार—"जहाँ संघर्ष मौजूद है वहाँ महत्व की बात यह है कि अपने भीतर नयी क्षमताएं पहचानी जाएं और यही संघर्ष का रचनात्मक उपयोग है।" या फिर नामवर के शब्दों में—"वस्तुओं की वास्तविकता और उसके अर्न्तविरोध को समझने का प्रयत्न कोने में दीवाल की ओर मुँह करके नहीं, लड़ाई के मैदान में आकर ही किया जा सकता है।"

यदि इन संदर्भों में हम कविता के महत्व का ऐतिहासिक विवेचन करें तो कबीर, निराला, धूमिल और दुष्यन्त इसलिए प्रासंगिक हैं, क्योंकि उन्होंने गिरते हुये सामाजिक मूल्यों को बचाने के लिए प्रहारात्मक रवैया अपना कर कविता में क्रान्तिकारी सम्भावनाएं तलाशीं। सातवें दशक के कुछ कवियों के अनुसार—"सम्राट स्वयं नंगा है, यदि कोई आवश्यकता है तो सिर्फ उसे नंगा कहने की, जिसके लिये साहस जरूरी है और इसी साहस का नाम है–ईमानदारी।" कटु सत्यों की अभिव्यक्ति के खतरे

तेवरीपक्ष -7

Scanned by CamScanner

उठ कर साफ-साफ कह देने या रखने की चेष्टा या ईमानदारी की जहाँ-जहाँ जिस कवि में कमी पायी है, समय साक्षी है, उस कविता का मूल्यांकन तब न हुआ हो, पर बाद में वह दोगली, समाजघाती प्रमाणित हुई। इसी दोगले या स मं ों, साम्राज्यवादियों को पुष्ट करने वाले साहित्य पर आज लगातार उँगलियाँ उठ रही हैं। आदि काल से लेकर छायावादी और आधुनिक कविता का पुर्नमूल्यांकन हो रहा है। चाहे रामचन्द्र शुक्ल तुलसी को श्रेष्ठ घोषित कर गये, पर आगे आने वाले आलोचकों ने ऐसे कवियों का अस्तित्व नकार दिया। जबकि कबीर के साथ ठीक इसके विपरीत हुआ। आगे चलकर द्विवेदी जी ने उन्हें भक्ति काल का श्रेष्ठ कवि घोषित किया। क्योंकि कबीर की कवि-ताएं पेड़-पौधों, झरनों में रमने के बजाय जन-साधारण के बीच समस्याओं से जूझती हैं, बुद्धि और तर्क की कसौटी पर खरी उतरी कविताएं ही समाज को कोई हल या दिशा दे सकती हैं। कबीर ने अपनी बौद्धिक कविताओं से यह प्रमाणित कर दिया। नामवर के अनुसार—"बौद्धिक कविता को कोई चाहे जितना अवास्तविक-बासी कहे, पर नाक पर पड़ा घूंसा अवास्तविक और बासी नहीं होता।"

कविता की ईमानदारी या सार्थकता इसी बात में निहित हैं कि विश्वास-घाती, समाजघाती, आताताइयों, साम्राज्यवादी शक्तियों के खिलाफ शब्दों का चाकू की तरह इस्तेमाल करें। क्योंकि मुक्तिबोध के अनुसार—"अभिव्यक्ति के खतरे उठाने का अर्थ मठों और गढ़ों को तोड़ने के साथ-साथ दुर्गम पहाड़ों के पार जाना है।" डॉ० शिव मंगल सिंह सिद्धान्तकार के अनुसार—"आज की कविता 'अंधेरे बन्द कमरे' की कशीदाकारी नहीं और न धूप में घोड़े पर बहस है" बल्कि लीलाधर जगूड़ी के शब्दों में—"कविता वक्तव्य और आत्मालाप से गुजरती हुई एक सार्थक संवाद में बदल गयी है और लड़ाई की भाषा हो गयी है।"

रमेशराज

—०—

Scanned by CamScanner

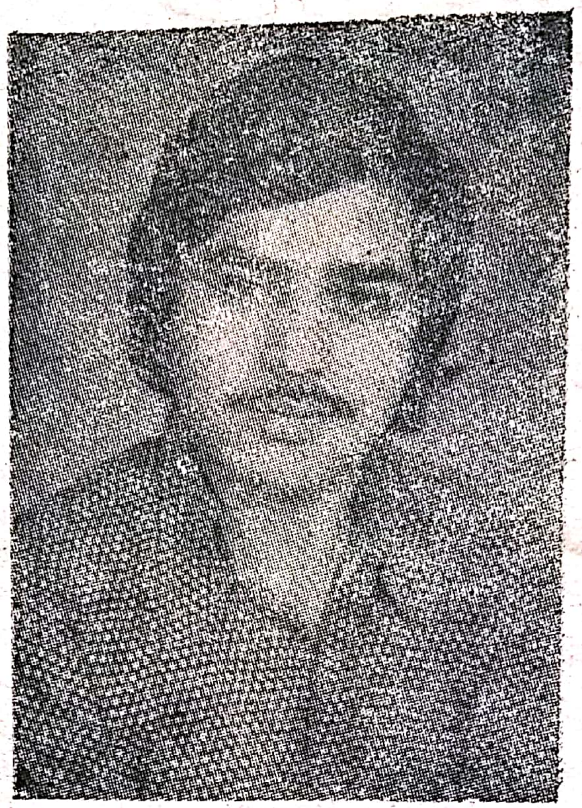

गिरीश गौरव

पूरा नाम—गिरीश कुमार
पिता का नाम—श्री महेन्द्र पाल सिंह
शिक्षा—एम० ए० हिन्दी
प्रकाशन—'इतिहास घायल है' तेवरी संग्रह में तेवरियां प्रकाशित
सम्प्रति—अध्ययन
सम्पर्क—११३९, नवींपुर कलां, हाथरस (उ०प्र०)

Scanned by CamScanner

तेवरियाँ

(एक)

हर तरफ सांसों पै पहरे हैं यहाँ।
आदमी के घाव गहरे हैं यहाँ॥
फूल के सब रंग फीके हो गये।
खार के रंगीन चेहरे हैं यहाँ॥
सुब्रह खाली बोतलों-सी लग रही।
रात-भर अय्याश ठहरे हैं यहाँ॥
आपकी गजलें न सुन पायेंगे ये।
बस्तियों के लोग बहरे हैं यहाँ॥

(दो)

लूटे हमें निजाम, यार कैसी आजादी ?
पास न एक छदाम, यार कैसी आजादी ?
सुबह, दोहर, शाम, फूल, खुशबू, हँसिकाएँ।
सब पतझड़ के नाम, यार कैसी आजादी ?
सुख तो कतराता है लेकिन दुख हमको।
करता रोज प्रणाम, यार कैसी आजादी ?

सार्थक कविता की सार्थक पहल—

कविता चुप नहीं (शीघ्र प्रकाश्य)

कवि-कुमार अशोक

सार्थक-सृजन प्रकाशन, १५/१०६, ईसा नगर, अलीगढ़

लघुकथाएं :—

मन: स्थिति — एक

उसे भूख का अहसास हुआ। उसने पास खड़े ठेले वाले से चने लिये और खाने लगा। ठेले वाले ने पूछा—"कहाँ नौकरी करते हो बाबू जी ?

उस युवक ने कोई उत्तर नहीं दिया। बल्कि ठेले वाले के पैरों की ओर देखकर उससे पूछ बैठा—"तुम अपाहिज होकर इतनी मेहनत कैसे कर लेते हो ?"

"ना बाबूजी ना, अपाहिज मैं नहीं अपाहिज, तो आप हैं जो आज तक इन डिग्रियों की बैसाखियों के सहारे चल रहे हैं।" ठेले वाले ने युवक की बे-रोजगारी की मन: स्थितियों को भांपते हुए उत्तर दिया।

—:o:—

मन: स्थिति — दो

"अजी सुनते हो........"

"हाँ बोलो क्या है........"

"तुम्हारा बॉस बहुत अच्छा आदमी है"

"क्यों क्या हुआ।........"

"आज उसने मुझे डिनर पर बुलाया था"

"फिर...... ....."

"फिर क्या.........तुम्हारा प्रमोशन हो गया है"

पत्नी के चेहरे पर छायी मुस्कराहट से निगाह उठाकर उसने घड़ी की ओर ताका, उस समय रात के दो बजे थे। उस युवक ने पत्नी की किसी भी बात का उत्तर न देते हुए बत्ती गुल कर दी और बिस्तर पर औंधे पड़े हुए सोचने लगा — ....."इससे तो अच्छे बे-रोजगारी के वही दिन थे जिनमें....."।

—:o:—

Scanned by CamScanner

नवगीत

दिन घायल-घायल-सा लगता
रातें सक्त-सनी।
अधर-अधर पर मिलतीं केवल
बातें रक्त-सनी।
कहने को इतिहास बहुत है
दर्द हमारे पास बहुत है।
आहों और व्यंग्य में डूबा
मन के भीतर हास बहुत है।
गली-गली आदम की मिलतीं
जातें रक्त-सनी।
शूली पर इन्सान चढ़ा है
सच के खन्जर रोज गढ़ा है।
थके-थके पावों के बल पर
मन मंजिल की ओर बढ़ा है।
हो जातीं हर रोज भूख में
आतें रक्त-सनी।

एक और बेवाक प्रस्तुति—
शीघ्र प्रकाश्य तेवरी-संग्रह
आज कैसी त्रासदी है
कवि-गिरीश गौरव
सार्थक सृजन प्रकाशन, १५/१०८, ईसा नगर, अलीगढ़

Scanned by CamScanner

भय से भरा हुआ मन जिसका, आतंकित हैं जिसकी आँखें
आहत होकर टूट गये हैं, जिसके कंधे।
सुख कोई भी बेटा बनकर, भाई बनकर
नहीं सहारा दे पाता है
हत्या-हत्या केवल हत्या, जहाँ आदमी चिल्लाता है
हर सीने में इतना गम है, हर कोई डूबा जाता है
इससे पूछो, उससे पूछो, सबका यही सवाल है—
यह कैसा भोपाल है? यह कैसा भोपाल?

एक दर्द की, एक जहर की, एक गैस की, एक कहर की
यहाँ कहानी लिखी हुई है, बस्ती के उन चौराहों पर
जहाँ मनाये जाते उत्सव, पीड़ित जनता की आहों पर
जनता की सड़ती लाशों पर, जहाँ पढ़ी जातीं कविताएं
यदि विश्वास नहीं हो तुमको, तो जाकर खुद ही सुन आएं
भारत-भवन चले जाना तुम, बड़ी अदा से वह बोलेगा—
मरने वाले अरे मरे हैं, उनसे अपना क्या नाता है
इन मरने वालों के संग में, हमसे नहीं मरा जाता है
मरने वालों को तो भाई! मरना ही हर हाल है
जी हाँ यह भोपाल है। जी हाँ यह भोपाल है॥

यहाँ नहीं मर सकता भाई! झूठ कपट रागदरबारी
यहाँ बाल्मीकि के वंशज, जनता की सड़ती लाशों पर
करते हुए मिलेंगे तुमको, कैसे नाटक की तैयारी?
ऐसा नाटक जिसमें सब कुछ मर जाता है
मरती नहीं स्वार्थ की कविता
ऐसी कविता—जिसने करीं क्रोंच हत्याएं
जिसने सीता को लूटा है, जिसने लवकुश को मारा है
जिसके शब्द शब्द में भाई, बैठा कोई हत्यारा है
बहिना से भाई को छीना, छीना माँ से लाल है
अरे यही भोपाल है। अरे यही भोपाल है॥

यहाँ बहुत से प्रगतिशील हैं
खुले हुए शब्दों में कहदूं—बाज, गिद्ध और चील हैं
दूर-दूर से ये आये हैं अपने—अपने स्वारथ लेकर
हम तो प्रगतिशील हैं भाई, बार—बार ये दोहरायेंगे
जनता के ये दुख-दर्दों को, कविता में ऐसे गायेंगे—
मरे नहीं जो, अन्धे गूंगे, या बहरे हैं
जिसके घाव बहुत गहरे हैं, / उनको कविता पढ़—पढ़ मारो
जरा गौर से सुनना प्यारो!
प्रगतिशील का मतलब अबतो होता एक दलाल है
क्या समझे भोपाल है? क्या समझे भोपाल है?

—रमेशराज

तेवरीपक्ष-7 पृ०-8

Scanned by CamScanner

।। तेवरी : मूल चेतना ।।

आज साहित्य के लिये सबसे बड़ा खतरा यह हो गया है कि वह सायास खांचों में फिट करके लिखा जा रहा है। खांचों में ढली साहित्य की सीमाएं, उसे अनावश्यक विस्तार से रोकती हैं—यह तो अच्छा, किन्तु सृजन में एकरूपता का नैरन्तर्य सर्जक में शिथिलता ला देता है। जीवन की समग्रता में व्यवहारिक जीवन के छोर पर चिंतन करना कुछ बनावटीपन-सा लगता है। लेकिन कभी-कभी एक निश्चित छोर पर विराम करने लगता है। मैं नहीं मानता कि सद्यः जात हैं ये छोर; मानव जीवन के अभ्युदय से हर्ष-विषाद, शोषक-शोषित, राग-विराग जैसे स्वर मुखरित होते रहे हैं और सदैव अपने-अपने तरीकों से मानव इनसे लड़ता आया है, जिनमें काव्य भी प्रारम्भ से ही (वैदिक युग) इस लड़ाई में इस्तेमाल होता रहा है।

मैं कबीर को सर्वाधिक महत्व का कवि मानता हूं क्योंकि उसकी सहजानुभूति कहीं भी कृत्रिमता नहीं लगती। सत्य को बे-झिझक और आक्रोश के साथ व्यक्त करने वाला सन्त कबीर! इसीलिये आज भी हमारा चहेता है। कबीर का युगीन—चेतना से सघन तादात्म्य था। काव्य की समकालीन विधा 'नयी कविता' पूर्णतः आश्वस्ति की बात करती है। आधुनिक जीवन में व्याप्त विसंगतियों, त्रास, कुण्ठाओं, यांत्रिकता से तो वह प्रभावित है। जीवन का प्रत्येक क्षण भोग है चाहे वह सुखद हो या दुखद; ऐसा नए कवियों का मानना है। किन्तु आज कविता के अस्तित्व पर प्रश्नवाचक चिह्न लग रहे हैं। कारण? अहम् के विगलन की अपेक्षा उसमें अहम् का रेखांकन अधिक होने लगा है। अतः लोक-सम्पृक्ति एवं व्यापक दृष्टि का अपेक्षित निर्वाह आज नयी कविता में नहीं देखा जाता।

जिस विधा को भाई देवराज ने 'तेवरी' नाम दिया है, वह अपने एक विशिष्ट तेवर की कविता है। इस तेवर में समाज के असुविधा-भोगी करोड़ों जनों की आक्रोश भरी झलक सब जगह द्रष्टिगत होती है। दूषित व्यवस्था के कुचक्र में शोषित, आज का मानव वस्तुतः विक्षिप्त मनः स्थिति तक आ गया है। तेवरी इसी शोषित मानव का आक्रोश भरा नारा है। कहा नहीं जा सकता—यह सद्यः प्रसूत विधा स्वीकार्य होगी या नहीं? किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि 'तेवरी' सही समय में, ऐसी आवाज को ध्वनित कर रही है जो निहायत जरूरी है। भाई रमेश ने बहुत सार्थक सवाल उठाया कि यदि 'तेवरी' निरर्थक है तो फिर सार्थक कविता कौन-सी है? इस सवाल को आगे बढ़ाते

Scanned by CamScanner

हुए यह भी पूछा जा सकता है कि समसामयिक कविता 'मजदूर' हॉकर, कुम्हार, रिक्शे वाला, क्लर्क आदि के माध्यम से क्या कहना चाहती है ? मैं समझता हूं यदि 'रोटी' समस्या है ? तो उसका समाधान क्या है ? कविता, साहित्य ? नहीं ! सिर्फ रोटी। शायद तेवरी की दृष्टि उसी 'रोटी' की ओर है।

मुझे तेवरी के अन्य संकलन पढ़ने को नहीं मिले हैं किन्तु आलेखों और तेवरियों की संक्षिप्त पत्रिका 'तेवरी-पक्ष' को पढ़ने से ही एक बेचैनी का आभास होता है, वीर–रस का संचार होने लगता है। आत्म-प्रकाशन और शृंगार के प्रेमियों को संभवतः ये गालियाँ भी लग सकती हैं। लेकिन, आज यही तस्वीर है इस देश की। जो लोग नारकीय जीवन जी रहे हैं क्या उनका प्रतिनिधित्व करना कोई बुरी बात है ? बढ़ती हुई बेरोजगारी आए दिन बलात्कार, डकैती, हत्याएं— किसका द्योतक है ? और असल में तेवरी का आक्रोश उसी शोषित मानव का आक्रोश है जिसके साथ यह सब हो रहा है या असुरक्षा के परिवेश में घिरा है वह।

मैं एक बार फिर जोर देकर कहूंगा कि यदि साहित्य का कोई सामाजिक सरोकार है तो उसे आम आदमी के बीच, उसी की भाषा को लेकर जाना होगा वरना यह सब बकवास है। भारत जैसे देश में जहाँ साहित्य कभी भी सार्वजनीन नहीं रहा वहाँ नारे ही सार्थक हो सकते हैं। वे देश में क्रान्ति तो नहीं कर सकते, किन्तु सशक्त विरोध कर, कुव्यवस्था को चौकन्ना तो कर ही सकते हैं। यह भी एक बहुत बड़ी सार्थकता होगी, साहित्य की। बहरहाल, इस अच्छी शुरूआत के सिलसिले को जारी रखने की जरूरत है.........

"यहाँ तो सिर्फ बहरे और गूंगे लोग बसते हैं
खुदा जाने यहाँ पर किस तरह जलसा हुआ होगा" (दुष्यन्त)

—श्री कमलेश मयंक

—:o:—

Scanned by CamScanner

तेवरी : बहुआयामी संभावनाओं की तलाश

मैं काव्य की हर विधा को एक महान रचनात्मक फलक देने वाली रचना-प्रक्रिया मानता हूँ। गद्य में मैंने अधिक काम नहीं किया है ललक गद्य में भी कुछ ऐसा लिखने की है जो पीड़ाओं का एक ऐसा प्रकोप हो जो सुविधा-भोगी धन कुबेरों को उनके ऊपर खतरा बन मडराता-सा लगे।

पीड़ाओं का, दलित जिन्दगी का, अभाव और शोषण का, मात्र जिक्र करने से व्यवस्था कहाँ सुनती है कि उससे कुछ बढ़िया उम्मीदें की जा रही हैं, शोषित समाज, सारा का सारा जन समूह समवेत स्वर में कुछ भी बोलने लगे तो किसी भी कोने से आवाज आयेगी कि कुछ होने लगा है। यही कुछ होना जन-जन की सम्भावनाओं को रूप रंग देने लगता है।

आपने जो मान्यताएं तय की हैं ये सभी मान्यताएं हर युग के सार्थक लेखन की होती हैं, समकाल से सृजन और प्रतिबद्ध लेखन की अहम् भूमिका त्रासद परिवेश की विडंबनाओं से निपटने, शत्रु वर्ग को ललकारने की गूँज होता है। यह सही है कि यातनाग्रस्त जीवन लगभग दयनीय-सा लगने लगता है, किन्तु इस शनिश्चरी भयावनी, कटखनी स्थितियों को आदमी कब तक भोगता रहे, कब तक ढोता रहे। कांटों सी चुभती पीड़ाओं को, चुनौतियों को परास्त कर उनसे उबरना है तो तेवर दिखाने ही होंगे। ऐसे तेवर रचनात्मक आवेश युक्त आवेग त्वरित ऊर्जा लिए हुए होने चाहिये।

हर समय विशेष में काव्य की विषय वस्तु, सृजनात्मक बिम्ब व रचना प्रक्रिया उस काल खण्ड की समस्त ठोस उपलब्धियों को उजागर करती हुई रहनी चाहिए। कारगर साहित्य के अनुरूप काल विशेष के कुछ अपने मापदण्ड होते हैं, उन मापदण्डों के आधार सृजित हो रहे साहित्य की पड़ताल भी होती है।

मैं कहता हूँ कि तेवरी आन्दोलन भी एक युगानरूप जन-जन को उनके हितों के दिलवाने का, दलितों को दलदल से बाहर निकालने का कुल मिलाकर सर्वहारा का अमूर्त किन्तु जरूरी हथियार है जो रोजी रोटी की लड़ाई में विजय दिलवाने का उपक्रम है। मुझे यह कहने में कतई हिचक नहीं है कि समकालीन लेखन में सृजित होता हुआ तेवरी साहित्य उस महाजाल

Scanned by CamScanner

से आदमी को मुक्ति दिलाने की शिकरत कर रहा है।

इधर यहाँ राजस्थान में तेवरी रचनाएं बहुत कम देखने को मिलती है। राजस्थान युगीन संदर्भों में तेवरी मिजाज के राजपूतों की महान परम्पराओं का प्रदेश रहा है यहाँ का इतिहास बहुत समृद्ध है, किन्तु वर्तमान में या समकालीन संदर्भों में बहुत हैरानी होती है, जो सृजन हो रहा है उसे पढ़कर।

आपने इस पत्र में उल्लेख किया है कि तेवरी न तो कोई गजल से ही साम्य रखती है, न विरोध, लेकिन मैं तो तेवरी कार्यक्रम को किन्हीं सीमाओं सिमटता हुआ नहीं देखता हूँ। कोई भी लेखन किसी भी विधा में हो यदि वह इन मान्यताओं को स्वीकारता है तो तेवर उसका प्राण होता है, है। मैंने ऐसे नवगीत भी लिखे हैं जो नवगीत के फोर्म से बिल्कुल अलग से और वे गीत तेवरी गीत हैं। ऐसे गीतों में ही तो कथ्य की सीधी सीधी टक्कर उस वर्ग के खिलाफ होती है जो जालिम है। वह वर्ग जो दलितों का जघन्य शोषण करता है। उससे ऐसे गीतों की जुबान सीधे स्वस्थ विचारों के साथ संप्रेषित होती है, यह पुरजोर कोशिश आतताइयों को एक खास अन्दाज में झंझोड़ती हुई उस ठेठ लड़ाई की भूमिका रचती है जो हर युग में अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिये पूरी हिम्मत और दिलचस्पी के साथ जमकर लड़ी जाती है।

मेरा मानना है कि समकाल के लेखन की माँग है कि भ्रष्ट व्यवस्था के काले कारनामों की चुगल करने मात्र से कुछ भी नहीं होगा, बल्कि उनके बुरे इरादों को मोड़ देने की जबरदस्त दखल होनी चाहिए। जरूरत उस लेखन की है जो अभावों में मर रहे गरीबों का, भूख से दम तोड़ रहे बेघर-बारियों का, दलित मजदूरों, सर्व हाराओं का पक्षधर हो, सृजन की साक्ष्य में उनकी पैरवी कर रहा हो।

मैंने खुद भी रोजी रोटी की जोड़ तोड़ के, छल प्रपंच करने वाली काली कलूटी पिशाचिनी कर-व्यवस्था को तोड़ फोड़ के, जीवन को थका देने वाली भाग दौड़ के, तथा उन समयसापेक्ष क्षणों को तेवरी गीतों में उकेरा है। तेवरी रचनाओं का शिल्प या विषयवस्तु क्या है, यह महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि महत्वपूर्ण तो यह होना है कि तेवरी रचनाएं हमारी सम्भावनाओं को कहाँ तक आगे ले जाती हैं?

—शिव योगी

Scanned by CamScanner

।। तेवरी ।।

भले दिखे ऊपर से सज्जन इस बस्ती का आदमी,
भीतर से रावण का रावण इस बस्ती का आदमी।
निष्प्रभाव ही, उठें कराहें चाहे सटे पड़ौस से,
सुला चुका करुणा–संवेदन, इस बस्ती का आदमी।
पड़ा भोग के द्वार, जल रहा कुण्ठाओं की आग में,
भूल, प्रेम का मन्त्र सनातन, इस बस्ती का आदमी।
लुटी लाज ने कही, सिसकते यही हृदय की वेदना,
ओढ़े सत का मात्र आवरण, इस बस्ती का आदमी।
प्रगतिशील बनने की धुनि में, अपना सब कुछ खो बैठा,
है, पश्चिम का अन्ध अनुकरण, इस बस्ती का आदमी।

दयाकृष्ण 'विजय'

सामाजिक क्रान्ति की रचनात्मक छटपटाहट
शीघ्र प्रकाश्य तेवरी—संग्रह

सत्य जब शूली चढ़ेगा

कवि---विजयपाल सिंह

मूल्य—सजिल्द बीस रुपये
सार्थक सृजन प्रकाशन, १५/१०६, ईसा नगर, अलीगढ़।

Scanned by CamScanner

तेवरियाँ

[एक]

कैसे-कैसे घाव मिले हैं, इनको कहाँ सजाएं हम ?
थके-थके-से पांव हमारे, क्या मंजिल तक जाएं हम ?
एक अकेली नन्हीं मुन्नी जान सड़क पर फंसी हुई
कैसे भागें, कैसे दौड़ें, कैसे इसे बचाएं हम ?
सूरज तो चमका कोठी पर, लेकिन अपनी कुठिया में।
एक अँधेरी रात मिली है, कैसे अब मुस्काएं हम ?
इस लम्बे बनवास से हम तो, लौट रहे थे घर अपने।
आज मिल गया देश निकाला, कितनी ठोकर खाएं हम ?
कौल हुआ था जिन मित्रों से, ईंटों-सा जम जाने का।
वे बालू-से बिखर गये हैं, क्या दीवार उठाएं हम ?

—श्री हरनाम शर्मा

[दो]

वो गली बोलो किधर है दोस्तो ?
आदमी का जिसमें घर है दोस्तो ॥
घूमते हैं सब मशीनों की तरह,
चीखता-सा क्यों शहर है दोस्तो ?
रोशनी की इस अनोखी दौड़ में,
झुलसा हुआ हर एक घर है दोस्तो ॥
तुम मुझे लाए यहाँ पर किस लिए,
यह तो जिन्दा मुर्दाघर है दोस्तो ॥
इस तरह से जा रहे हैं सब कहाँ,
कैसा यह लम्बा सफर है दोस्तो ?

—श्री जितेन्द्र शंकर बजाड़

Scanned by CamScanner

तेवरी : युवा आक्रोश की तीसरी आँख

'तेवरी' के प्रति मेरा ध्यान निरन्तर आकर्षित होता रहा है और आज की हिन्दी कविता के सन्दर्भ में, मैं इसे एक सार्थक एवं साहसी कदम कहना चाहता हूं। एक काव्यविधा अथवा काव्यदृष्टि के रूप में 'तेवरी' का ताना-बाना अलीगढ़ में तैयार हो रहा है लेकिन इसकी काव्यसर्जना के पैटर्न अन्य स्थानों पर भी बुने गये हैं या जाने लगे हैं। इसे मैं 'तेवरी' में निहित कथ्य की चिनगारी और शिल्प की आँच के प्रसार रूप में देखता हूं।

मेरे शहर में युवा आक्रोश के कवि रमेशराज, अरुण लहरी, योगेन्द्र शर्मा और सुरेश त्रस्त ने 'जन जागरण' की विचार-प्रधान त्रैमासिकी 'तेवरी-पक्ष' का सम्पादन प्रारम्भ किया। इसके अंकों में प्रकाशित सामग्री को मैं देखता रहा हूं। श्री रमेशराज द्वारा सम्पादित 'तेवरी' कवियों के कुछ समवेत संकलन भी मुझे देखने को मिले। 'तेवरी' के विस्फोटक कथ्य और आक्रोशपूर्ण मुद्रा का जो सटीक परिचय कराते हैं, इन संकलनों के नाम हैं—(१) अभी जुबाँ कटी नहीं, (२) कबीर जिंदा है, (३) इतिहास घायल है। इन संकलनों में लगभग ढाई दर्जन कबियों की तेज-तर्रार और धारदार रचनाएं संकलित हैं। तेवरी कवि श्री बेजार की रचनाओं का एक स्वतन्त्र-सम्पूर्ण संकलन भी प्रकाशित हुआ है—'एक प्रहार लगातार'। काव्य—संग्रह का यह नाम भी तेवरी कवियों की युयुत्स मनःस्थिति और तेवरी विधा के बोध-पक्ष को उजागर करता है। श्री बेजार से कई कारणों से मेरा कुछ गहरा परिचय है। उनके इस काव्य-संग्रह को मैंने बहुत ध्यान से और किंचित् आत्मीयता के साथ पढ़ा। 'तेवरी' के प्रति मेरी अनुशंसा और आस्था का प्रसंग यहीं से शुरू होता है।

कुछ समय पूर्ण, अलीगढ़ के बुद्धिजीवी वर्ग के बीच आयोजित श्री बेजार की काव्यकृति 'एक प्रहार-लगातार' के विमोचन-समारोह की अध्यक्षता का भार मुझे सौंपा गया। इसके लिये 'सार्थक-सृजन प्रकाशन' के नियामक और 'तेवरी' के सूत्रधार श्री रमेशराज का मैं विशेष आभारी हूं। उक्त अवसर पर मैंने 'तेवरी' को युवावर्ग की तीसरी आँख की संज्ञा दी थी। पुराण-पुरुष शिव की तीसरी आँख जब खुलती है तो किसी ज्वालामुखी की भाँति तप्त लावा उगलती है और पाप का प्रत्यूह तथा कामाचार का अवरोध जलकर राख हो जाता है। ध्यान-मग्न शिव की समाधि बहुत मुश्किल से टूटती है लेकिन जब कभी ऐसा होता है तो कोहराम मच जाता है—कृत्रिम वसन्त में आग लग जाती है। अवामी गजल, जनवादी कविता और तेवरी के शब्द-संधान को देखकर ऐसा प्रतीत होने लगा है कि वर्तमान सामाजिक विसंगतियों और सामाजिक विद्रूपताओं में आग लगाने के लिये युवा-आक्रोश की तीसरी आँख खुल गई है। विश्व-वाङ्मय का इतिहास साक्षी है कि कविता से फूल और त्रिशूल दोनों का काम लिया गया है। सामाजिक क्रान्ति के सन्दर्भ में कवि की कलम हरसिंगार की टहनी में तलवार उगा

लेती है। आज के सामाजिक जीवन में जो अन्याय, उत्पीड़न और शोषण की विभीषिका है, उसी के समानान्तर युवा कवियों की कलम अन्याय की शृंखला को काटने के लिये तलवार और शोषण के पूंजीवादी प्रपंच को जलाने के लिये बारूदी भूमिका तलाश कर रही है। 'तेवरी' के तेवर इसी पृष्ठभूमि में ध्यातव्य हैं—

"अब हंगामा मचा लेखनी, कोई करतब दिखा लेखनी।
मैं सूरज हूं इन्कलाब का, मेरा इतना पता लेखनी।"

—रमेशराज : अभी जुबाँ कटी नहीं।

"अब कलम तलवार होने दीजिये / दर्द को अंगार होने दीजिये।
घायल है इतिहास समय के वारों से, / चलो रचें साहित्य आज अंगारों से।"

—बेजार, एक प्रहार : लगातार।

'तेवरी' विधा अथवा वाद रोमानी गजल का युयुत्सावादी हिन्दी रूपान्तर मात्र नहीं है। समकालीन कविता में गजल का प्रचार खूब हुआ है और तेवरी के कवि भी गजल के पैटर्न के प्रति आकर्षित दिखाई पड़ते हैं किन्तु इनकी गजलनुमा रचनाओं में हिन्दी-छन्दों का प्रयोग विशेष द्रष्टव्य है। आल्हा के लोकछन्द में बुनी गई एक सफल रचना इस प्रकार है—

"हाथ जोड़कर महाजनों के पास खड़ा है होरीराम।
ऋण की अपने मन में लेकर आस खड़ा है होरीराम।।

—सुरेश त्रस्त : कबीर जिन्दा है।

और दोहा छन्द में तेवरी का एक यह प्रयोग देखिये—

"रोजी-रोटी दे हमें या तो यह सरकार।
वर्ना हम हो जाएंगे गुस्सैले खूं-ख्वार।।"

—रमेशराज : कबीर जिन्दा है।

'तेवरी' की रचनाओं में पुराने छन्दों के अभिनव प्रयोग के साथ जनभाषा की मुखरता और संप्रेषण की सहजता एक विशिष्ट आयाम को उभारती है। अब कविता में जन-भाषा की शब्दावली और मुहावरों का प्रयोग बहुत जरूरी है। कविता यदि क्रान्ति का औजार और सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है तो उसमें सीधा और सटीक संप्रेषण भी होना चाहिए। सातवें दशक में अलीगढ़ से अखिल भारतीय स्तर पर 'सहज कविता' अभियान चलाते हुए मैंने अनुभूति की सार्थकता और अभिव्यक्ति की सहजता पर विशेष बल दिया था। मुझे खुशी है कि नवें दशक में 'तेवरी' ने इस ऐतिहासिक दायित्व को ग्रहण करने की सूझबूझ दिखाई है। समकालीन हिन्दी कविता में इसके भविष्य के प्रति मैं आशान्वित हूं।

—डा० रवीन्द्र भ्रमर

Scanned by CamScanner

तेवरी : आक्रोश की एक स्वाभाविक प्रक्रिया

दुनिया की महान कृतियाँ 'बागी' ही रही हैं। व्यवस्था के प्रति यह आक्रोश स्वाभाविक ही है—राजनीतिक समीकरण अब पूर्ण रूप से व्यावसायिक सिद्ध हो चुके हैं। इसलिये मैं इसे अच्छी शुरूआत मानता हूं। नवनीत लेपकों औ नपुंसकों की भी देश में कमी नहीं है—आलोचनाएं खूब होंगी; खुशहाल पक्ष की ओर से अस्वीकृतियों/नाराजगियों की आवाज भी गूंजेगी। नयी विधा की स्थापनार्थ, संघर्ष का मूल्य तो चुकाना ही पड़ेगा।

—श्री कमलेश मयंक

समकालीन सामाजिक, राजनीतिक विसंगतियों पर

प्रहार करता हुआ

तेवरी संग्रह—१

'अभी जुबां कटी नहीं'

सम्पादक—रमेशराज

(सहयोगी मूल्य—५ रुपये)

सशक्त हस्ताक्षर—

अरुण लहरी, अजय अंचल, योगेन्द्र शर्मा

सुरेश त्रस्त, ज्ञानेन्द्र साज, रमेशराज

Scanned by CamScanner

॥ तेवरी : प्रेमालाप नहीं ॥

परिस्थितियां दिन पर दिन बदतर होती जा रही हैं। चारों ओर वातावरण, में घुटन, संत्रास, भ्रष्टाचार, अन्याय व्याप्त है, ऐसे समय में प्रेमालाप करना ठीक उसी भाँति, जिस प्रकार कोई अपनी झोपड़ी में आग लगने पर मल्हार गाये—मैं आपकी इस बात से पूर्णतया सहमत हूं।

तेवरी को सहज भाषा से उठाया गया है एवं इसमें चौपाई, दोहा, आल्हा घनाक्षरी, सवैया, छंद सभी कुछ शामिल हैं। इसके अन्तर्गत गजल की तरह कोई नियम एवं विधान नहीं है। आप अपनी बात सहज एवं स्वतन्त्र रूप से कहने में समर्थ हैं।

यहीं पर मैं कहना चाहूंगा कि इस सहजता के नाम पर कुछ लोगों ने ऐसी तेवरी लिखी हैं जो हास्यास्पद-सी मालूम होती हैं जिनका कि कोई भी साहित्यिक स्तर नहीं मालूम पड़ता है। मैं मानता हूं कि नयी कविता में भी ऐसा कुछ हुआ है, लेकिन तेवरी में इसकी अधिक गुंजाइश हो गयी है। काव्य की कोई भी विधा हो जब तक उसकी भाषा बोधगम्य एवं अपीलिंग नहीं होती, वह जनमानस पर अपनी छाप नहीं छोड़ पाती। साहित्य का कोई भी आन्दोलन तभी तक जिन्दा रहता है जब तक कि उसके पीछे कोई निश्चित दिशा एवं गंतव्य होता है।

—श्री आदित्य श्रीवास्तव

जनाक्रोश की सशक्त अभिव्यक्ति

तेवरी संग्रह—३

इतिहास घायल है

सम्पादक—रमेशराज

मूल्य—१० रुपये

संग्रह के सशक्त हस्ताक्षर :—

अरुण लहरी, विजयपाल सिंह, योगेन्द्र शर्मा, सुरेश त्रस्त,
गजेन्द्र बेबस, अनिल कुमार 'अनल'
गिरीश गौरव, रमेशराज आदि।

Scanned by CamScanner

॥ तेवरी : साहित्य के नए तेवर ॥

तेवर वस्तुतः पूंजीवाद एवं सामन्तवाद से उपजी शोषक मानसिकता, व्यक्ति-परक स्वार्थ में डूबी राजनीति एवं अन्धी परम्परा की पोषक विचारधारा के खिलाफ ओजस्वी; तेजस्वी स्वर ही नहीं बल्कि आक्रोश परिपूर्ण प्रखर स्वर भी है।

समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, अत्याचार, अनाचार पापाचार, हाहाकार की की जड़ों में सैद्धान्तिक प्रहार हेतु काव्यात्मक हुन्कार है तेवरी।

तेवरी के नए-नए प्रयोग "तेवरी हिन्दी गजल का एक रूप है" इस मान्यता को बड़े जल्दी झूठ साबित कर देंगे। इस कामना के साथ—

सन्नाटों के लिये हुन्कार तेवरी
सड़ी-गली मानसिकता का उपचार तेवरी
साहित्यक गति-प्रगति नए तेवर की जननी
स्वार्थ और अन्याय हेतु हथियार तेवरी।

—श्री गिरि मोहन 'गुरु'

कुव्यवस्था की रीढ़ पर :

'एक प्रहार : लगातार'

कवि—दर्शन 'बेजार'

संपादक—रमेशराज

संपर्क—१५/१०९, ईसानगर अलीगढ़

तेवरी उनको क्या निचोड़ेगी........?

तेवरी के तेवर देखने-पढ़ने लायक हैं, गोया ये बदलते वक्त की तस्वीर हैं। तेवरी के तेवर कुछ ज्यादा ही तेज होने के कारण तेवरी का फार्म गजल से बिलकुल अलग है। फिर भी दुष्यन्त की हिन्दी गजलों से तेवरी आगे नहीं जा पा रही है, ऐसा क्यों ? यदि यह भोंथरापन यूं ही रहा तो यह अपने उद्देश्य में ठीक होने के बावजूद नयी पौध के तेवर से ज्यादा कुछ और नहीं रह पायेगी।

दर असल यह नये तेवरों की अनुशीलन विधा है जिसमें राग है, लय है, और सबसे बड़ी बात इसकी मारक क्षमता है। यह नंगों की नंगाखोरी नहीं लेती बल्कि सफेदपोशों को सरे-आम नंगा करती है।

तेवरी वक्त की जरूरत को बखूबी समझती है। पर भाई जो निचुड़ चुके हैं उनको तेवरी क्या निचोड़ेगी ? यही सवाल नंगा नहाने वालों के साथ है। उन्हें बाथरूम से निकालो यार ! भले ही जूते मारकर निकालना पडे। अब हम साहित्य में जूते चलाने लगें तो हमारे बूढ़े हमें निकम्मा भी कह सकते हैं या फिर श्लील और अश्लील भी। जो संसद में जूते चलाते हैं उन्हें हमारे साहित्य के बाप जब समय-समय अपना बाप कहते आ रहे हैं तब ये साहित्य में जूते की जन्मपत्री को बुरा क्यों मानते हैं ?

—श्री राम मीना

सत्यप्रकाशन की अनुपम भेंट

'मचान' तेवरी संग्रह

सम्पादक—पवन कुमार पवन

मूल्य—पांच रुपये, सजिल्द—दस रुपये

संपर्क—श्री पवन कुमार 'पवन', पशु चिकित्सालय, शामली

Scanned by CamScanner

विषाक्त यथार्थ का विसर्जन जरूरी है

वक्त की 'त्यौरी' के साथ आदमी के 'तेवर' भी बदल रहे हैं। ये तेवर यथार्थोन्मुखी होकर खोखले आदर्शों की लहरों को चीर रहे हैं, तो क्या आश्चर्य ? साहित्य का प्रयोजन भी यही है। जो कुछ है अर्थात् यथार्थ त्रासद और दमघोंट है, और जो आदर्श हैं वे भी खोखले और बेमानी हैं अर्थात् कथनी और करनी के मुखौटों में कोई ताल–मेल नहीं है। इन तमाम विरोधाभासों और जानमारू परिवेश में व्यक्ति का दमघुट रहा है, तो उसकी त्यौरी तनेगी ही, आक्रोश होगा ही, लेकिन तेवरी पक्ष को यह भी बताना होगा कि जो कुछ भी यथार्थ है, उसमें आदर्श रूप में होना क्या चाहिए ? 'तेवरी पक्ष' अपनी इस जिम्मेदारी से बरी कैसे हो सकती है ? विषाक्त यथार्थ का विसर्जन करना है, तो सृजन क्या करना है, और कैसे करना है ? 'तेवरी पक्ष' यह भी बताए, तो हमारा प्रयास सामायिक तौर पर सार्थक होगा।

—डा० निष्काम

जन–विरोधी मानसिकता पर एक और प्रहार

तेवरी संग्रह—२

कबीर जिन्दा है

सम्पादक—रमेशराज

(सहयोगी मूल्य—१० रुपये, सजिल्द–२० रुपये)

राजेश महरोत्रा, गिरि मोहन गुरु, ऋषभदेव शर्मा देवराज

डा० देवराज, फजल इमाम मल्लिक, राजकुमार निजात

विक्रम सोनी, डा० एन० सिंह, अरुण लहरी, अनिल

'अनल', योगेन्द्र शर्मा, सुरेश त्रस्त, रमेशराज, आदि।

Scanned by CamScanner

तेवरी : बुनियादी जरूरतों हेतु संघर्ष

तेवरी काव्य का मूल स्वर आपातकालीन स्थिति एवं आतंककारी व्यवस्था को संबोधित है, जिसमें व्यवस्था तंत्र के क्रूर अमानवीय आचरण की ओर संकेत है और एक संकल्प–चेतना की अभिव्यक्ति भी उपस्थित रहती है। इनमें आत्मग्लानि, भय, आत्म-विडम्बना, आतंक एवं विसंगति के विचार इन्हीं सन्दर्भों से उत्प्रेरित रहते हैं। तेवरी ऊपरी तौर से देखने पर सामाजिक संस्थाओं, पद्धतियों और व्यवस्था–तन्त्र को संबोधित है। सामाजिक हित के भाव को व्यक्त करने वाला आत्मपरक अनुचिंतन/भाव-उन्मेष ही इनमें महत्वपूर्ण होता है। मगर तेवरीकार ··· सामर्थ्य का परिचय देकर सामाजिक संघर्ष में भागेदारी का एहसास भी उपजाता है। तेवरी का संदर्भ जिन्दगी की बुनियादी जरूरतों के लिये लड़ा जाने वाला संघर्ष है। जिसके रग-रग में पूँजीवादी अमानवीयता के प्रति क्रोध एवं असह्य घृणा परिव्याप्त दिखती है। एक अन्य अर्थ में तेवरी को चारों ओर व्याप्त सड़ाध को नष्ट करने के लिये एक व्यवहारिक संकेत माना जाता है।

—श्री शिव कुमार थदानी

भारतीय पुलिस के आतंककारी रूप का
ऐतिहासिक विवेचन

आतंक (लघुकथा संग्रह)

मूल्य—सजिल्द—बीस रुपये

सं०—नंदल हितैषी, संयो०—धीरेन्द्र शर्मा

अन्तरा प्रकाशन, ५१ श्रीशचन्द्र बसु मार्ग, इलाहाबाद

जन-पीड़ा से जुड़कर तेवरी का भविष्य उज्जवल हो सकता है

साहित्य ने सदैव सामाजिक स्थितियों के अनुसार समय की मुंहजोर हरकतों को आंकने के साथ-साथ सामाजिक बदलाव की पृष्ठ भूमि भी तैयार की है। काव्य कला की दृष्टि से नयी कविता, अकविता और अब तेवरी विधा की आन्दोलनात्मक हलचल जनमानस में चेतना लाने के लिये सुखद परिणाम प्रस्तुत कर सकती है, बशर्ते इसे यथार्थमयी दृष्टिकोण के साथ जन-पीड़ा से जोड़ने का प्रयास किया जाय। मैं यदि इसमें जनता की समस्याओं; परेशानियों को अभिव्यक्ति देने के लिये भाव-भाषा का खुलकर प्रयोग किया जाय तो तेवरी केवल केमरे की कला होने के बजाय देश समाज तथा व्यक्ति को उनके मौलिक अधिकारों के लिये किये गये संघर्ष को और तेजतर कर सकेगी। इसके लिये तेवरी रचनाकारों को नुक्कड़, चौराहों पर साहस के साथ कवि सम्मेलन आयोजित करने पड़ेंगे।

गजल के निकट की प्रभावी स्वतन्त्र विधा तेवरी का भाषायी पैनापन, तेज तर्रार रवैया, विकृतियों, विसंगतियों पर हथियार की तरह इस्तेमाल; बिगड़ती स्थितियों से निपटने का दबदबा तभी कारगर हो सकता है जबकि इसके रचनाधर्मी अपनी मान्यताओं की रक्षा हेतु हर तरह के खतरों (खासतौर से जो परम्परागत साहित्य से उत्पन्न हुए हैं) को झेलने के लिये अपने भीतर सामर्थ्य और साहस रख सकें।

तेवरी का किसी वाद या खेमे से न जुड़ना इसके उज्जवल भविष्य का संकेत है, तथा जीवन से हर तरह मात खाये हुए व्यक्ति के हित में एक भरोसेमन्द आवाज है। इसकी आवाज में नयी पीढ़ी का बल तथा भविष्य की चमक एकाकार होकर सर्वत्र नया रंग, नयी खुशबू बिखेर सकती है।

—श्री निरंजन कुमार 'निराकार'

सामाजिक पीड़ा की संवेदनात्मक प्रस्तुति

शीघ्र प्रकाश्य कविता संग्रह

दर्द साक्षी है

कवि—गजेन्द्र 'बेबस'

मूल्य—सजिल्द—बीस रुपए

सार्थक सृजन प्रकाशन, १५/१०९, ईसानगर, अलीगढ़।

Scanned by CamScanner

तेवरी : एक आवश्यकता

आज की कुरीतियों. अनैतिकताओं पर कुशाग्र–तीरों से प्रहार करने के लिये (कभी सीधे तौर पर, तो कभी प्रतीतात्मक उलझे घुमावदार पथों से होकर) काव्य की वह सृजन कला है–'तेवरी' जिसे पढ़ते–सुनते और गुनते हुये, हमारी संवेदनाओं के तार झनझना उठते हैं और 'तेवरी' में व्यक्त 'सच' को जन–साधारण द्वारा स्वयं ही स्वीकृति मिल जाती है।

इस विधा का बहुत ही प्यारा गुण है कि पढ़ते और सुनते हुये हमारे तेवर में सचमुच एक स्वाभाविक परिवर्तन आ जाता है ? आज के युग में 'तेवरी' की विशिष्ट आवश्यकता-सी दीख पड़ती है।

—श्री अमरनाथ 'मोही'

टूटते बिखरते सामाजिक मूल्यों का

ऐतिहासिक दस्तावेज

शीघ्र प्रकाश्य कविता संग्रह

दीदी ! तुम नदी हो

कवि रमेशराज

मूल्य—दस रुपये

तेवरियाँ

[एक]

आदमी को खो रहे हैं हम।
आज कैसे हो रहे हैं हम?
जन्म लेगी प्रीतिभक्षी पौध।
बीज ऐसे बो रहे हैं हम॥
शोक–प्रस्तावों में रखके मन।
किस तरह से रो रहे हैं हम?
पाप से लड़कर किया ज्यों पाप।
कैसे पापी हो रहे हैं हम?
सत्य को किस दिन खुली है आँख।
जागकर भी सो रहे हैं हम॥
अनुभवों की साँस घुटती है।
प्राणवायु खो रहे हैं हम॥

[दो]

तंत्र जबसे हर तरह बहरा हुआ है।
चीखने का सिलसिला ठहरा हुआ है॥
हर नशेमन पर यहाँ एक चील बैठी है।
हर परिन्दे पर यहाँ पहरा हुआ है॥
इस कुंए ने प्यास कब अपनी बुझाई?
उनकी खातिर ही सदा गहरा हुआ है॥
गा रहे हैं लोग ऐसे राग–दरबारी।
उसके चेहरे-सा हर एक चेहरा हुआ है॥
स्वप्न आँखों में अभी हरियाली बोते हैं।
सच तो यह है आदमी सहरा हुआ है॥

—श्री कुमार अशोक
रैन बसेरा, सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़

Scanned by CamScanner

तेवरी : अपना काव्यशास्त्र स्वयं रच रही है

तेवरी सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक, धार्मिक अथवा अन्य किसी भी प्रकार की कुव्यवस्था के विरुद्ध उठाया जाने वाला असन्तोषजन्य आक्रोश-मय तेवर है, जो विशेष शब्दावली के माध्यम से पाठक को भोगे हुए क्षणों की वेदना का अनुभव करा देता है।

तेवरी जमीन से जुड़कर चलती है और उसका हर सोच अपनी जमीन के लिये है, यथार्थवादी है।

तेवरी बेलाग किन्तु सच्ची और स्वास्थ्यकर बात कहने में विश्वास रखती है और उसे प्रयोग भी करती है—चाहे बुरी लगे या भली, ठीक कबीर की तरह।

तेवरी व्यंग्य से भी आगे बढ़कर चुनौती देती है जो कुव्यवस्थामय स्थितियों, कुरीतियों अन्धविश्वासों का चेहरा नोंच लेना चाहती है।

तेवरी इस चुनौती से भी आगे बढ़कर सीधे-सीधे (सीधी उंगली को टेढ़ी कर आँख निकालने की मुद्रा अपनाती हुई) तीव्र प्रहार करती है।

तेवरी किसी भी प्रकार की 'दुरभिसन्धि' को नहीं स्वीकार करती है। उसके अनुसार तो—

जब तक जिए हैं सिर्फ अपनी शर्त पर जिए।
समझौते पर लगे, वो अंगूठे नहीं हैं हम॥

तेवरी किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिकता, वाद अथवा खेमे में बंधकर नहीं चलती, क्योंकि यह आदमी की, आदमी के लिये, आदमी द्वारा रची गयी कविता है।

तेवरी के साथ जीते हुए क्षणों में हास्य अथवा दैहिक श्रृंगार के लिये रत्तीभर भी स्थान नहीं है।

तेवरी क्रान्ति की बात करती है, बारूद का आटा बाँटने का सन्देह देती है; किन्तु यह क्रान्ति आदमी के विरुद्ध नहीं, कुव्यवस्था के विरुद्ध है—ध्यातव्य है।

तेवरी भाषा, छन्द अलंकार, मुहावरे, प्रतीक सभी स्तरों पर स्वतन्त्र इयत्ता की स्वामिनी है। अतः गजल से उसके विरोध का प्रश्न ही नहीं उठता है। तेवरी की भाषा अत्यन्त परुष और तीखी होती है। उसका शब्द-शब्द

Scanned by CamScanner

अग्निवाण होता है जो कुव्यवस्था के रावण को नष्ट करने के लिये सदा उद्यत रहता है। तेवरी भीड़ में से शब्दों को उठाती है और भीड़ के दिलो-दिमाग में बो देती है। जबकि गजल अपने निजी अर्थ एवं कथ्य दोनों ही दृष्टियों से भिन्न है। गजल में शृंगार प्रधान होता है और उसका प्रत्येक शेर अपना अलग अस्तित्व रखता है, जबकि तेवरी दैहिक शृंगार के विरुद्ध है और इसका प्रत्येक तेवर मूल विषय से किसी भी प्रकार कटकर नहीं चलता है। गजल में मक्ता-मतला का अनुशासन मानना पड़ता है, जबकि तेवरी में ऐसा करना आवश्यक नहीं है। गजल के काफिया—रदीफ तेवरी की तुकों से भाव में तथा भाषा में भिन्नता लिये हुए हो सकते हैं। अच्छी तेवरी की तुक गजल के काफिया–रदीफ़ के लिए अनुपयुक्त हो सकते हैं अपनी निजी विशेषता के कारण।

तेवरी में मुहावरों तथा प्रतीकों का विशेष महत्व है। इन्हीं से तेवरी सप्रमाण है। तेवरी के प्रतीक ऐसे हैं जो जनसामान्य की समझ में तुरन्त आ जाते हैं और उसे वस्तुस्थिति का ज्ञान करा देते हैं। ये प्रतीक राजनैतिक, नौकरशाही, प्राकृतिक, दैनिक व्यवहार सम्बन्धी, वैज्ञानिक व तकनीकी, ऐतिहासिक व पौराणिक वातावरण सम्बन्धी, शरीर व रोग संबंधी, स्थान सम्बन्धी, पशु-पक्षी सम्बन्धी तथा अन्य विविध प्रकार के हैं।

जहाँ तक रस की बात है तो यह आवश्यक नहीं कि हम प्राचीन सिद्धान्तों को ही अपना उपजीव्य स्वीकार करें, अपना रास्ता स्वयं तलाश न करें। रस–सिद्धान्त की कसौटी पर तो नई कविता भी अस्तित्वहीन और निरर्थक सिद्ध हो जाती है। सच तो यह है कि तेवरी किसी पाणिनि या पतंजलि के हाथों की अष्टाध्यायी नहीं बनना चाहती, वह किसी मम्मट या पण्डितराज का काव्यशास्त्र भी नहीं बनना चाहती। वह अपना व्याकरण भी स्वयं रच रही है और अपना काव्यशास्त्र भी। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि तेवरी और गजल शिल्प के स्तर पर कहीं भी एक दूसरे की विरोधी नहीं हैं। दोनों अलग-अलग विधाएं हैं। जो लोग तेवरी को गजल मानते हैं, वे भारी भूल करते हैं। वे उदारता एवं विवेक का साथ छोड़ रहे हैं।

—डॉ० कृष्ण अवतार 'करुण'

—:o:—

Scanned by CamScanner

॥ तेवरी : एक नया कीर्तिमान ॥

"तेवरी" का बदलता तेवर समाज में फैले भ्रष्टाचार, जमाखोरी, बेईमानी, रिश्वतखोरी, अशिक्षा, बेकारी, राजनैतिक पैंतरों, धर्म, जाति, भाषा, प्रान्त इत्यादि समस्याओं से जूझते हुए मानव को दिशा ज्ञान देनें का एक सार्थक प्रयास है। तेवरी दिशाहीन युवाओं को न केवल दिशा ज्ञान ही करायेगी, वरन् इस दूषित व्यवस्था को बदल कर स्वस्थ मानसिकता वाले समाज की स्थापना में महत्वपूर्ण योग-दान प्रदान करेगी। 'तेवरी' वास्तव में पत्रिकाओं की इस बाढ़ में एक नया कीर्तिमान स्थापित करते हुए, समाज के वातावरण को दूषित एवं विषाक्त बनाने वाले सत्ता-लोलुप कीटों को नष्ट करते हुए स्वस्थ साहित्यिक माहौल कायम कराने की एक महत्व-पूर्ण कड़ी सिद्ध होगी ताकि फिर से एक बार प्रेमचन्द्र, रामचन्द्र शुक्ल, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रसाद, निराला, आदि की लेखन परम्परा समाज में स्थापित हो सके तथा पतनोन्मुख समाज में फिर से एक बार पठन पाठन का माहौल बदलते तेवर के रूप में स्थापित हो सके।"

—श्री उमेश चन्द्र मिश्र

कृष्ण की प्रेम लीलाओं का पुर्नमूल्यांकन
शीघ्रप्रकाश्य कविता—संग्रह

प्रेम न जानें श्याम

मूल्य—सजिल्द—बीस रुपए

कवि—विजयपाल सिंह, रमेशराज

सार्थक सृजन प्रकाशन, १५/१०९, ईसानगर, अलीगढ़।

।। तेवरी : माटी की सुगंध ।।

कवि या कथाकार अपने चारों ओर व्याप्त परिवेश से प्रभावित होकर ही कुछ लिखता है, चाहे वह लेखन उस परिवेश का समर्थन करे या विरोध। वह उस परिवेश को संदर्भ में रखकर लिखता है, जिससे उसका सीधा ताल्लुक होता है, जिसमें वह जीता है।

फिर विशेष भाव–सम्प्रेषण के लिये के लिये छन्द विशेष या काव्य–रूप विशेष की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि आज हमें 'तेवरी' विधा की आवश्यकता पड़ी है, जिससे विधा विशेष में हम युगानरूप भावों को सही ढंग से सम्प्रेषित कर सकें। 'तेवरी' युग की माँग है और हम सभी तेवरीकारों का यह कर्त्तव्य है कि युग की माँग को, युग की पुकार को तेवरी के मार्फत सम्प्रेषित करें।

'तेवरी' समकालीन सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त अन्तविरोधों पर कुठाराघात करने वाली विधा है। साथ ही यह एक ऐसे समाज की स्थापना की आवश्यकता को महसूस करती है, जिसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, और वैचारिक शोषण की गुंजायश नहीं हो।

'तेवरी' सच को सच और झूठ को झूठ कहने के लिए कृतसंकल्प है।

'तेवरी' दिवास्पन्न नहीं देखती, बल्कि यह यथार्थ के धरातल पर खड़ी है।

'तेवरी' शोषितों के लिये तलवार के समान है। जिसकी मदद से वह अपनी रक्षा भी करता है और दुश्मनों पर आक्रमण भी।

'तेवरी' क्रान्तिकारी विचार और मान्यता रूपी सैना के लिए अग्रिम दस्ते का काम करती है।

'तेवरी यथार्थवादी विचारधारा की पोषक है। यह अन्य किसी भी वाद की पोषक या पक्षधर नहीं है। इसमें अपनी माटी की सुगन्ध आती है।

जहाँ तक तेवरी के शिल्प का सवाल है, हम इसे गजल से अलग की विधा मानते हैं। 'तेवरी' हिन्दी का एक विशेष काव्य–रूप है, जो मात्रिक छन्द पर आधारित है।

—श्री हरि नरायण सिंह 'हरि'

Scanned by CamScanner

तेवरी : रचना प्रक्रिया कुछ तो है ही.......

जिस वक्त नाटक से एकांकी की पहचान अलग रूप में स्थापित करने की प्रक्रिया चल रही थी, तब एकांकीकारों को नाटकविदों का कोपभाजन होना पड़ा था। श्री विष्णु प्रभाकर इस पीड़ा को भली भांति जानते हैं। जब लघुकथा की पुर्नस्थापना की प्रक्रिया (सातवें दशक के अन्त व आठवें दशक की शुरूआत) हुई तब प्रतिष्ठित सम्पादकों एवं लखकों ने इस कार्य को कुंठित और असफल लोगों का जमाबड़ा कह डाला और यहाँ तक कि कमलेश्वर जो किन्हीं लोगों की निगाह में लघुकथा के मसीहा है ने सारिका १९७२ (दिसम्बर) पृष्ठ ७ पर देवेन्द्र मोहन की एक टिप्पणी छापी कि लघुपत्रिकाओं के सम्पादक सूडो क्रान्तिकारी हैं और उनके हाथों में साहित्य खिलौने से अधिक कुछ नहीं। वस्तुतः ये मारकर मरने लिये पैदा हुए हैं। आदि-आदि।

बात सारी यह थी कि उन दिनों लघुपत्रिकाओं ने ही लघुकथा उत्थान का बीड़ा उठाया था। देवेन्द्र मोहन की उस टिप्पणी का भारत भर में इतना विरोध हुआ कि कमलेश्वर को हारकर १९७३ में एक लघुकथा खण्ड ही छापना पड़ा था और वह लघुकथा के संरक्षक का लेबल पा गये। खैर—

जब गीत से नवगीत निकला तब बड़ी अजीब-२ बातें कही गयीं कि ये नवगीत क्या होता है ? पर आर० सी० प्रसाद सिंह व नचिकेता ने इस बात की कहाँ परवाह की और 'अन्तराल' पत्रिका के माध्यम से नवगीत को प्रतिष्ठित कर दिया।

हिन्दी गजल का पिता दुष्यन्त को कहा जाता है और उनकी शैली में सूर्यभानु गुप्त जैसे लेखक प्रसिद्धि पा गए। तब से गजल ने नये-नये तेवर बदले और एक तेवर तेवरी के रूप में आया, जिसे गजल वाले शुद्ध गजल के विरुद्ध षडयंत्र मान रहे हैं। तेवरी की अलग पहचान बताने में तेवरी-पक्ष ने श्रम किया है और इसने रचना–प्रक्रिया की टैक्नीक भी बयान की है, पर काफी लोगों ने इसकी खिल्ली उड़ाई है जैसी कि लघुकथा की टैक्निक बयान करना मूर्खता लगती है, इन लोगों को। अगर तेवरी में दम होगा तो इसे स्थापित होने से कौन रोक सकेगा और अगर इसके अनुयायी निम्नस्तर पर ही सोचते रहेंगे तब इसके विकास से कैसे सहायता मिलेगी ? जरूरत इस बात की है कि तेवरी पर ही जिन लोगों को लड़ना दिखाना है, वे पहले आपस में ही इसके अंग प्रत्यांगों पर कोई समझौता कर लें। —जगदीश कश्यप

Scanned by CamScanner

तेवरी : गजल की नकल नहीं

'तेवरी' समाज में उन घुनलगे हुए लोगों की कारगुजारियों को हमारे समक्ष ला रही है, जो देश के कमजोर, शोषित, बेरोजगार, अशिक्षित, भोलेभाले, असहाय एवं खून–पसीना एक करने वाले गरीब लोगों को चुन–चुनकर खा रहे हैं। देश में गरीब और गरीब तथा अमीर और अमीर होते जा रहे हैं, उसका रहस्य अब तेवरी ही खोल रही हैं। इसके लिये निडर एवं साहसी रचनाकारों एवं सम्पादकों को शत्-शत् बार बधाई।

आजकल के भ्रष्ट, रिश्वतखोर, आलसी, नकलची, एवं फिजूलखर्ची, सफेद-पोशों पर निश्चय ही तेवरी ने एक तलवार का काम किया है। यदि इस पर भी उनका सुधार एवं देश का सुधार नहीं होता है, तो इस देश का ईश्वर ही मालिक होगा।

वैसे आजकल के प्रकाशित साहित्य में हमने वर्तमान शासकों के घिनौने कार–नामों को उजागर करते हुए नहीं पढ़ा। लेकिन 'तेवरी' के रचनाकरों ने निष्पक्ष' भेदभाव रहित बेहिचक, निडर होकर, उन लोगों के कुकृत्यों को उजागर किया, जो देश के कर्णधार एवं मसीहा कहे जाते हैं। ऐसे नाजुक समय में जब देश में खंडता के बादल चारों ओर मडरा रहे हैं, ऐसे समय में 'तेवरी' एक ढाल का काम रही है। कहने का तात्पर्य यह है कि तेवरी-रचनाएं देश के नवयुवकों में ऐसे भाव भर रही हैं, जिससे वे लोग देश की खंडता को रोकेंगे।

मेरे विचार से 'तेवरी' का भाव निष्पक्ष है, जो हमारे लिए व समाज के लिए एक दर्पण के तुल्य है, जिसमें समाज के शोषित, सीधेसाधे लोग यह देख सकते हैं कि हमारी खून-पसीने की कमाई का क्या होता है?

हम उन लोगों के विचारों से बिल्कुल नहीं सन्तुष्ट हैं, जो 'तेवरी' को पक्षपाती एवं गजल की नकल का एक रूप कहते हैं। क्योंकि तेवरी के तेवरों ने जिस प्रकार आज-कल के यथार्थ का चित्रण स्पष्टरूप से किया है, वैसा आधुनिक गजलों में नहीं मिलता है।

'तेवरी' के द्वारा चन्द लोगों के जुल्म सबके सामने गाए गये हैं, जो हमारे शहीद अशफाक उल्लाह, रामप्रसाद बिस्मिल, रोशन लाल एवं चन्द्रशेखर आदि क्रान्ति–कारियों की विचारधारा को आगे बढ़ाते हैं।

—श्री रामानुज वर्मा

Scanned by CamScanner

तेवरी : टैस्ट-ट्यूब बेबी नहीं

हिन्दी साहित्य में जब भी कोई नयी विधा जन्म लेती है, बहुत से हाथ उसका गला घोंटने के लिये उठ खड़े होते है; अनेकों हाथ उसके चेहरे पर तेजाब डालने के लिये तत्पर हो जाते हैं। कुछ हद तक वे उस नवजात शिशु का चेहरा विकृत करने में सफल भी हो जाते हैं किन्तु पूरी तरह उसके अस्तित्व को नष्ट नहीं कर पाते। थोड़े से ही हाथ उसके पालन पोषण में लग पाते हैं; और कालान्तर में जब वही शिशु चेहरे पर एक विशिष्ट चमक लिये अपने पूरे कद के साथ साहित्य जगत में मुस्कुराता हुआ खड़ा हो जाता है तो वे ही हाथ जो कल तक उसका गला घोंटने और उसके अस्तित्व को मिटा डालने के लिये कटिबद्ध थे फिर उसके सामने नमन की मुद्रा में जुड़ जाते हैं।

आज यही स्थिति 'तेवरी' की है। इसके विरोध में बहुत से हाथ उठ खड़े हुए हैं। कुछ इसका स्वरूप बिगाड़ने तथा कुछ इसे गजल का विकृत रूप घोषित करने में लगे हैं।

इसी प्रकार लघुकथा को भी इन विरोधी हाथों ने नकारने का बहुत ही प्रयास किया, किन्तु वे सफल न हो सके। आज भी कुछ विरोधी हाथ छद्मवेश में लघुकथा के स्वरूप को बिगाड़ने पर तुले हुए हैं। किन्तु लघुकथा इस खतरे से अब पूरी तरह उबर चुकी है और अपना एक ओज पूर्ण चेहरा लिये हिन्दी मंच पर सीना तानकर खड़ी हो गयी है! किन्तु 'तेवरी' इस खतरे से पूरी तरह उबर नहीं पाई है बल्कि यह खतरा तेवरी के सिर पर अभी भी मंडरा रहा है। इसके लिये तेवरी के पोषक हाथों को अभी काफी संघर्ष करना है और मैं यह दावे के साथ कह सकता हूं कि इस संघर्ष में वे विजयी होंगे और इसके विरोधी कल इसके समक्ष हाथ जोड़े खड़े मिलेंगे।

"तेवरी" की उत्पत्ति युगानरूप है। समय की मांग के अनुसार ही इसका जन्म हुआ है। यह टेस्ट ट्यूब बेबी की तरह कृत्रिम गर्भाधान से उत्पन्न अथवा जोड़-तोड़ कर बनाया गया रूप नहीं है बल्कि लघुकथा की तरह पाक साफ वैधानिक एवं प्राकृतिक (स्वाभाविक) तौर पर उत्पन्न रूप है।

—श्री रवीन्द्र कंचन

।। तेवरी की प्रासंगिकता एवं सौन्दर्यबोध ।।

तेवरी, दिनानुदिन साहित्य की एक सशक्त विधा का रूप ले रही है-यह निर्निवाद सत्य है। दरअसल इसका मूल कारण, आज की विकट व संकटपूर्ण परिस्थितियाँ हैं। साहित्य युग का प्रतिनिधित्व करता आया है, इस अर्थ में तेवरियाँ आज महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। वास्तव में आज की स्थिति जैसी असहाय और पंगु हो गयी है, वैसे पहले कभी न थी।

आज तेवरी तथा गजल के बीच मानसिक संघर्ष है। कुछ लोग तेवरी को गजल का ही प्रारूप मानते हैं। एक पक्ष का कहना है—जब गजल के ही सारे नियम तेवरी में मौजूद हैं तब इसका दूसरा नाम "तेवरी" के रूप में क्यों दिया जाय? 'तेवरी' नाम से एक अलग साहित्यिक विधा चलाने का कोई औचित्य नहीं। गजल भी तेवरी जैसी लिखी जा रही है और उसमें वही गुण हैं जो तेवरी में दीख पड़ते हैं।

दूसरे पक्ष का कहना है कि—

गजल और तेवरी में अन्तर रखना अतिआवश्यक है।......समय की माँग है, परिस्थिति का तकाजा है। गजल में वे बातें और अर्थ सन्निहित नहीं है जो तेवरी में होते हैं। वह चीख छटपटाहट और कसमसाहट, गज़ल से नहीं निकल पाती जिस मायने में तेवरी बिल्कुल सक्षम है।

......तेवरी के अस्तित्व का हम सूक्ष्मातिसूक्ष्म परीक्षण एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करें—

किसी व्यक्ति की भृकुटि तन गई तो कह बैठें कि उनका तेवर चढ़ गया। 'तेवर' चढ़ने का तात्पर्य–खौफ, भय, क्रोध से है।

......अब सवाल उठता है कि उसका तेवर क्यों चढ़ा?

......अवश्य ही व्यवस्था की विसंगतियाँ होंगी या व्यवस्था के विरुद्ध आक्रोश प्रकट करने की एक अभिव्यक्ति—

मौसम बड़ा उदास है, अब तेवरी कहो।
पीड़ा के आसपास है, अब तेवरी कहो। —गिरि मोहन गुरु

.... - सिर्फ अभिव्यक्ति ही नहीं, अन्याय व शोषण के विरुद्ध जेहाद छेड़ने की स्पष्ट उग्रता भी—

तब खौफ न होगा मेहनतकश के जीवन की पगडन्डी में।
जब फोड़ रहेगा हर मजूर, हर जुल्मों के बुनियादी को ।।२ शिव कुमार थदानी

Scanned by CamScanner

इस मायने में तेवरी तथा गजल के बीच बुनियादी दृष्टिकोण से विचार करें तो जो बातें 'तेवरी' से निकलती हैं, वह 'गजल' से नहीं। गजल के अस्तित्व पर हम आयें। यह रीतिकालीन, मुगलकालीन, शायरों की देन है। वास्तव में गजल उस समय के शायरों द्वारा रचित श्रृंगार रस से ओत-प्रोत नायक-नायिका के संयोग व विरह की अनुभूतियों में उत्प्लावित मार्मिक, हृदय स्पर्शी व करुणापूर्ण दास्तान थी और आज इस आधुनिक परिवेश में भी 'गजल' शब्द का अर्थ मस्तिष्क में उसी छवि को प्रतिबिम्बित करता है।

इस दृष्टिकोण से तेवरी विधा का अस्तित्व गजल से बिल्कुल पृथक होना ही चाहिए। तेवरी में नायक-नायिकाओं की विरह-दास्तान सुनने को नहीं मिलेगी। जैसा गुण, वैसा नाम और वैसा ही काम अर्थात् यदि आप तेवर चढ़े व्यक्तियों से प्रेमालाप करने लगे तो फिर अंजाम क्या होगा? इस बात का अनुमान आप अच्छी तरह लगा सकते हैं। संभव हो, वह दो-चार थप्पड़ आपको जड़ भी दें। यही बात तेवरी कविता के संग बिल्कुल सटीक बैठती है। तेवरी को गजल कह देना या गजल के रूप में स्वीकार करना, वास्तव में तेवरी साहित्यिक विधा के साथ बलात्कार करना होगा।

इस प्रकार मेरी समझ में, गजल और तेवरी दोनों अलग-अलग परिस्थिति, मानसिकता की देन है, तब हम कैसे उन्हें एक ही स्थान पर बिठा सकते हैं? यह तो वही कहावत चरितार्थ हुई—'एक म्यान में दो तलवार नहीं रह सकतीं, दोनों का उद्देश्य व क्षेत्र एक दूसरे के पृथक है।

इस सम्बन्ध में यह विवाद कि चूंकि तेवरी गजल का ही रूप है, बिलकुल निरर्थक है, क्यों कि रूप भले ही गजल का पाया हो किन्तु गजल के समान इसने आशिकाना मन नहीं पाया है।

आज जो लोग गजल के नाम से तेवरी का भाव दे रहे हैं, वास्तव में वे गजल की मूल भावना से खिलवाड़ तो कर ही रहे हैं, साथ ही तेवरी की प्रतिष्ठा पर आघात भी पहुंचा रहे हैं।

वैसे गजल की महत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। किन्तु यदि आप भूखे हों आपके तेवर चढ़े होंगे तो, श्रृंगार-रस से भीगी कविताएं नहीं सुनना चाहेंगे और न ही सुनाना चाहेंगे। भरे पेट ही गजलें ग्राह्य और कुबूल की जा सकती हैं।······ आज पूरे देश में कुछ ही ऐसे धनाढ्य व्यक्ति हैं, जिन्हें पेट की चिन्ता नहीं करनी होती। दरअसल वे ही आज की बिगड़ी व्यवस्था के जनक हैं।

लूट कर खाते हैं, वे अब देश की हर योजना।
उनकी खातिर हर प्रगति आहार होती जा रही है॥ ३ —अरुण लहरी

वस्तुतः यह कितनी शर्मनाक स्थिति है कि आजादी को सैंतीस वर्ष बीत गये किन्तु राष्ट्र के अड़सठ करोड़ (१९८१ की जनगणना के अनुसार) की आबादी में सिर्फ साठ लाख ही गरीबी की सीमा से ऊपर हैं। शेष अड़सठ करोड़ चालीस हजार लोग अब भी गरीबी सीमा के नीचे हैं।

भ्रष्ट हुई सरकार, आँकड़े बोल रहे।
जरा पढ़ो अखबार, आँकड़े बोल रहे॥ ४ —अरुण लहरी

....आखिर ऐसा क्यों है? इसके जिम्मेदार कौन हैं? क्या ये मन्त्री, नेता नहीं? जो अपने ऐश-आराम तथा देश-विदेश घूमने में करोड़ों रुपये वार्षिक खर्च करते हैं? ऐसे लोग वोट के समय बड़े-बडे आश्वासन देते हैं किन्तु जब कुर्सी मिलती हैं तो वे भूल जाते हैं—आखिर किसके बदौलत उन्हें "यह कुर्सी" मिली है।

देख लो क्या हो गया है हाल अब सरकार का ?
वोट से रिश्ता जुड़ा है, तोड़ रिश्ता प्यार का॥ ५—अनिल कुमार 'अनल'

आज मनुष्य की सबसे बड़ी समस्या है भूख निवारण की ....

रोटी सबकी जान सखी री, रोटी तन-मन प्रान सखी री।
नंगे भूखों की बस्ती में, रोटी है भगवान सखी री॥ ६—रमाकांत दीक्षित

यहाँ देश की आधी जनता दो शाम, भर-पेट भोजन भी नहीं कर पाती..........

....हर एक तन पर पड़ रही महँगाई की मार।
बस्ती-बस्ती लोग अब, रोटी को लाचार॥ ७ —रमेशराज

आर्थिक विपन्नता ने देश को राहू के समान ग्रसित कर लिया है। चारों ओर असन्तोष का साम्राज्य फैला हुआ है।

इस कदर मनहूसियत तो मुल्क में छाई न थी।
जो दशा है आज, वह पहले कभी आई न थी॥ ८ —राजेन्द्र सोनी

इस असन्तोष का साम्राज्य अर्थात् 'भूख' को सदा बनाये रखने में समाज के शोषक, ठेकेदारों तथा पूंजीपतियों के लिये 'तेवरियों' की आवश्यकता है, न कि शृंगार-रस में डूबी प्रेमालापों द्वारा रीतिकालीन कवियों के समान मन बहलाने वाली कविताएं—गजलों की। फिर साठ लाख लोगों द्वारा भले ही गजल की महत्ता स्वीकार की जाय। पर भरे पेट ही गजलें सुनने में आनन्द आता है। किन्तु अड़सठ करोड़ चालीस लाख लोगों की सुबह-शाम चढ़ी हुई त्योरियाँ, भृकुटियाँ देखने को मिलेंगी, जिन्हें एक-एक पैसा जुटाने की चिन्ता असमय ही निर्बल, कृशकाय और मरनासन्न बना डालती है तथा मौत के करीब पहुँचाने में सहायक होती हैं।

Scanned by CamScanner

जिन्दगी पर भार-सी है जिन्दगी ।
आजकल बीमार-सी है जिन्दगी ।। ९ —सुरेश त्रस्त

व्यक्तिपूजा अब यहाँ व्यापार होती जा रही है ।
इसलिये इन्सानियत बेकार होती जा रही है ।। १० —अरुण लहरी

झूठों का होने लगा, गली-गली सम्मान ।
ढोता भईया आजकल, हर सच्चा अपमान ।। ११ —रमेशराज

आज आदमीयत कितनी बौनी हो गयी है—

भूल गया है आदमी यह असलियत ।
कि आदमी से बड़ी है आदमीयत ।। १२ —विन्देश्वर प्रसाद

....दर असल इस असमानता, अनियमितता व भ्रष्टाचार आदि के विरुद्ध उपेक्षा, उदासीनता, विद्रोह, असन्तोष, सन्त्रास, कुण्ठा तथा पीड़ा के स्वर को मुखर करने के लिये साहित्य की यदि कोई विधा है तो वह पद्य में तेवरी तथा गद्य में लघुकथा ही। इसके सिवा और कोई दूसरी इतनी स्वीकार्य, उचित, सशक्त अभिव्यक्तिपूर्ण विधा नहीं। इस मत को आज सभी प्रबुद्ध-जीवी साहित्यकार भी स्वीकार करने लगे हैं। इस मायने में निश्चित रूप से कहा जा सकता कि तेवरियों की शैशवास्था शीघ्र ही यौवनावस्था में पहुंचने की ओर अग्रसर है और उत्तरोत्तर विकास के पथ पर गतिशील रहेगी। तेवरी अपने लिये नहीं जनता के लिये जीती है इसी कारण वह जन-विरोधी मानसिकता पर तीखे प्रहार करना चाहती है—

बोझ बनती जा रही है यह व्यवस्था देश पर ।
कुछ न कुछ कर डालिये, यूं तिलमिलाहट किसलिये ।। १३ —ज्ञानेन्द्र साज

क्या खूब हुआ आज, प्रजातन्त्र मेरे यार ।
इस देश में तो हो गया, चुनाव का व्यापार ।। १४ —राधे गोबिन्द 'राजीव'

सोखकर ले जाएंगे ताजे गुलाबों का लहू ।
सिर्फ वादों की सुनहरी तितलियाँ दे जायेंगे ।। १५ —अजीज आजाद

अतीत गया, वर्तमान भी टूट रहा है ।
भविष्य का हो क्या, अब अंजाम देखिये ।। १६ —टी महादेव राव

कातिलाना ढंग से वे मुस्कराये हैं ।
जब कभी भी लौटकर दिल्ली से आये हैं ।। १७ —चरण लाल 'चरण'

हमी ने आपको पाला, पसीने की कमाई से ।
हमारे आप कुत्ते थे, हमी को काट खाया है ।। (१८) —डा० देवराज

देखिये, बेच डाली उन्होंने, अपनी आदमीयत।
अब तो बौने दीख पड़ने लगे, ये शहर ।। (१९) —बिन्देश्वर गुप्त

आदमी के स्तर में नहीं रहने लगा आदमी।
कुत्तों से भी बदतर, अब, लगने लगा आदमी ।। (२०) —बिन्देश्वर गुप्त

कर दिया कुर्सी ने देश को तबाह दोस्तो।
दूध–धुले हो गए सब स्याह दोस्तो ।। २३ —चरण सिंह 'अमी'

वास्तव में सौन्दर्य का बोध 'तेवरी' में जिस तरह से देखने को मिलता है, वह सौन्दर्य सिर्फ किसी नारी की गोरी चमड़ी में नहीं देखा जा सकता। सौन्दर्य का सम्बन्ध आत्मा से है, चाहे वह सौन्दर्य साहित्यिक विधाओं में किसी कविता, कहानी, लघुकथा, निबन्ध, गजल या तेवरी का हो या मनुष्य का। सौन्दर्य की उपज व्यक्ति की मानसिकता व व्यक्तित्व से है जो उसके विचार, मन, स्वभाव के द्वारा प्रदर्शित होता है।

गजल में खूबसूरती अवश्य है—इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता। किन्तु किसी लावण्यमयी यौवना की दोनों हथेलियों तथा पैरों में रची मेंहदी और महावर, हाथ में हस्तचूर्ग तथा गले में कंठभूषण भले ही उसके शारीरिक सौन्दर्य में चार चाँद लगा दें और वह उवर्शी सदृश अति—सुन्दर दीख पड़ने लगे, किन्तु यदि वह कर्कशा व अभिमानी हो तो उसके सारे शारीरिक सौंदर्य फीके पड़ जाते हैं।

दरअसल सौन्दर्य तो किसी के मन में देखा जाता है। उक्त आभूषणों से विहीन उस साँवली–सलोनी यौवना में भी सौंदर्य देखा जा सकता है जिसकी लाज भरी बोझिल पलकें मुंदती–खुलती, चेहरे पर मुस्कराहट तथा स्नेहसिक्त मृदुवाणी द्वारा दूसरों को सहज आत्मीय बना लेने की प्रवृत्ति से युक्त हो। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्तित्व के सौंदर्य के लिये सिर्फ वाह्य चेहरा ही नहीं बल्कि आंतरिक गुण भी होने चाहिये। तेवरी जन–साधारण के मन की अभिव्यक्तियों को ही प्रकट करती है,

आदमी को जहर दे कुत्ता लगे तुम पालने।
आदमीयत इस तरह पहले तो मर पायी न थी ।। २३ —राजेन्द्र सोनी

तेवरी जन विचारों, भावनाओं का सम्मान करती है, उनके दुख में शामिल हो जाती है, उनकी कड़ुवाहट को पीती है, उनकी पीड़ा को अपनी पीड़ा समझ दीप की भाँति सारी रात अँधेरे से जूझती है नयी सुबह की प्रतीक्षा करती हुई उन्हें भविष्य के प्रति आगाह करती है..................

राहत तुम को ये कल देंगे, बातें झूठी।
बिन खाये कुछ चावल देंगे, बातें झूठी॥
सिक्कों से चलते हों जिनके नाते-रिश्ते।
साथ तुम्हारे वो चल देंगे, बातें झूठी॥ २५ —राजेश मेहरोत्रा

तेवरी प्रणय निवेदन नहीं वल्कि कुव्यवस्था तथा असंतोष के खिलाफ विद्रोह की माँग जले हुए स्वरों में करती है और यह है तेवरी का सौन्दर्य—बोध जो गजल की अपेक्षा किसी भी दृष्टिकोण से निम्न नही कहा जा सकता। हाँ दोनों का जन्म एक ही माँ की कोख से हुआ इसीलिए ये जुड़वा बहनें कहलाने की अधिकारी तो हो ही सकती हैं। जन्म के पश्चात् पहली ने हवेली, राजघराने, कोठे पर परवरिश पायी तो दूसरी ने फुटपाथ पर।

शिव कुमार थदानी (सम्पादक–'दूसरा प्रतीक) ने अपने आलेख 'तेवरी मूल्याँकन के नये सन्दर्भ' में (दूसरा प्रतीक जनवरी अंक १९८५) स्पष्ट कहा है—

'तेवरी में औपचारिकता का पूर्णतः अभाव एवं उत्पीड़ित शोषित वर्गों से भावनात्मक लगाव व उनके संघर्षों की बेलाग बयानी है, साथ ही साथ व्यवस्था की क्रूरता का भयावह रूप भी प्रतिबिम्वत होता है इसमें—

कुल शहर बदहवास है, इस तेज धूप में।
हर शख्स जिन्दा लाश है, इस तेज धूप॥ २६ —नीरज

कुव्यवस्था विसंगति यातना, पीड़ा के बीच तेवरी का जन्म होने के कारण इसका विद्रोही स्वर मुखरित हुआ है और यह स्वर मौजूदा परिवेश को भयावहता व क्रूरता का जामा पहनाने वाले उन शोषकों, नकाबपोशों, स्वार्थी नेताओं की देन है, जिस कारण तेवरी को ऐसा रूप मिला है।

रिश्वत चलती अच्छी खासी, खुलकर आज अदालत में।
सच्चे को लग जाती फाँसी, खुलकर आज अदालत में॥ २७ —सुरेश त्रस्त

टुकड़ा पाने के लिये था, कल जो भौंका रात भर।
आज वो कुत्ता शहर का, सुना नेता हो गया॥ २८—रामेश्वर हिमाँशु

सूरज की हत्या करना, आसान नहीं था लेकिन अब।
होता है, सिलेसिलेवार ये, खबर छपी अखबारों में॥ २९—राजकुमार निजात

हर ओर यहाँ छाया आज अँधेरा है।
इन्सानों को नगरी में हैवानों का डेरा है॥ ३० —फजल इमाम मल्लिक

कोल्हू के बैल की तरह, चलते रहे हैं हम।
पग–पग पे अपने आप को, छलते रहे हैं हम॥ ३१ —गिरि मोहन 'गुरू'

Scanned by CamScanner

तीन बीघे खेत में इतनी फसल पैदा हुई।
चार दाने घर को आये, शेष जाने क्या हुई॥ ३२ —राजेश मेहरोत्रा

आज देश की साँस—साँस पर कर्जे का।
लदा विदेशी भार, आँकड़े बोल रहे। (३३) —अरुण लहरी

जिसने भी हो, हाँ छीना अब, तुझसे तेरी आजादी को।
तो तोड़ के उसकी पसली-पसली, फाड़ो उसकी खादी को। (३४) -शि० कु० थदानी

आज की परिस्थितियों में जहाँ तेवरियों की प्रासंगिकता की बात आती है तो इसकी महत्ता स्पष्ट झलकने लगती है।

फिर भी तेवरी तथा गजल भावनात्मक व प्रायोगिक स्तर से भले ही दो अलग-अलग विधा मान ली जायें जिसका फायदा तेवरी के समर्थक उठा रहे हैं, किन्तु सैद्धांतिक रूप से, पैदाइश के रूप में तो एक ही माँ के कोख से जन्मी हैं। हाँ, वातावरण अलग होने के कारण दोनों के रूप में अन्तर हो जाता है।......किन्तु आवश्यकता इसकी पैदाईश भी अलग करने की है ताकि इसके सिद्धान्त अर्थात् शिल्प गजल से विभिन्न हो। क्यों कि गजल में तेवर के भाव दीख पड़ने पर उसे गजल न कह कर 'तेवरी' की मान्यता दे दें, तब यदि कोई छन्दयुक्त या छन्दमुक्त नयी कविता या गीत आदि जिनसे 'तेवर' के भाव स्पष्ट प्रतिविम्बत होते हों, तो क्या हम उसे भी तेवरी कहेंगे?......यदि नहीं कहेंगे तो क्यों नहीं कहेंगे? क्या "तेवर' सिर्फ गजल में ही तेवरी के समर्थकों को दीख पड़ रहा है अत: उसे गजल नहीं कहकर 'तेवरी' बता रहे हैं तो फिर नयी—कविताओं या अन्य छन्दयुक्त या छन्दमुक्तकविताओं/गीतों में तेवर के भाव देखकर वे क्यों नहीं उसे भी तेवरी कहेंगे? ......यह सवाल आज तेवरी के समर्थकों के लिए प्रश्नचिन्ह बन गया है जिसका उपयुक्त व उचित समाधान/जबाव आवश्यक है ताकि तेवरी के विरोधी पक्षों की जुबां पर ताले लगाए जा सकें।

फिर भी, इतना तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि आज के जिस परिवेश/परिस्थिति में हम साँस ले रहे हैं उसमें गजल की नहीं, तेवरी की आवश्यकता है और वास्तविकता यह है कि लोगों का आकर्षण इसीलिये तेवरी की ओर अधिक दीख पड़ रहा है।...अब वह दिन दूर नहीं, जब तेवरी को लोग मान्यता देने लगें।

शृंगार-विरह की, शराबो-शबाब की।
हर चर्चा बकवास है, अब तेवरी कहो॥ (३५) —गिरि मोहन गुरु

सिर्फ बड़े व प्रसिद्ध कवियों द्वारा तेवरी को मान्यता नहीं देना कोई औचित्य नहीं दीख पड़ता है दरअसल साहित्य में परिवर्तन परिस्थिति के अनुसार सदा होता आ रहा है और आज इसी परिवर्तन की आवश्यकता है।

तेवरीपक्ष-7

क्र.सं.	संदर्भित पत्रिकाएं	पृष्ठ
२	दूसरा प्रतीक–अंक २, सं० शिव कुमार थदानी	
३	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	४८
४	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	४६
५	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	६३
७	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	५९
८	तेवरी-पक्ष चार सं० रमेशराज	१८
९	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	५४
१०	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	४८
११	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	६०
१४	दूसरा प्रतीक अंक २, सं० शिव कुमार थदानी	२७
१८	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	२५
२३	तेवरी पक्ष—४ सं० रमेशराज	२२
२४	तेवरी पक्ष—४ सं० रमेशराज	१८
२५	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) रमेशराज	९
२६	दूसरा प्रतीक अंक २ सं० शिव कुमार थदानी	१९
२७	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	५२
२८	दूसरा प्रतीक अंक २ सं० शिव कुमार थदानी	२३
२९	दूसरा प्रतीक अंक २, सं० शिव कुमार थदानी	२२
३०	तेवरी पक्ष—४ सं० रमेशराज	२०
३१	दूसरा प्रतीक अंक २, सं० शिव कुमार थदानी	२४
३२	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) रमेशराज	१०
३३	कबीर जिन्दा है (तेवरी संग्रह) सं० रमेशराज	४६
३४	दूसरा प्रतीक अंक २ सं० शिव कुमार थदानी मुख पृष्ठ	

क्र० सं १२, १९, २०—अप्रकाशित

क्र० सं० १, ६, १३, १५, १६, १७, ३५—तेवरी-पक्ष–३ पृष्ठ, क्रमशः—४६, ४९, ४७, ४७, ४८, ४८, ४६।

—श्री बिन्देश्वर प्रसाद गुप्ता

Scanned by CamScanner

तेवरी-पक्ष
पत्रकीय
अलीगढ़

तेवरी धीरे-धीरे वयस्क होती जा रही है। गजल और तेवरी काव्य पर आपका विवेचन चटपटा और तीखा सच है। श्री राम शुक्ला राम, विजयपाल सिंह, दयाकृष्ण विजय, जनक राज पारीक, ने नुकीली और धारदार रचनाएं दी हैं, जो सड़े-गले अंगों को काट फेंकने जैसी शल्यक्रिया लगती हैं।

—सुश्री शकुन्तला सिरोठिया

तेवरी-पक्ष का मंच स्तम्भ (सम्पादकीय) पढ़कर तेवरी के स्वतंत्र अस्तित्व/आन्दोलन पर पुर्नविचार के लिये वाध्य हुआ। स० रा० पुष्करणा ने तेवरी को गजल का ही एक रूप माना था, तब से मन में यही धारणा थी कि तेवरी को गजल से अलग मानना मूर्खता है, पर आपका अकाट्य तर्क तेवरी को गजल से अलग करता है।

—डॉ० स्वर्ण किरण

मंच अन्तर्गत आपने महत्वपूर्ण सवाल उठाये हैं। —डॉ० दुर्गा प्रसाद अग्रवाल

हिन्दी में नयी विधाओं के लिये सही वकालत की आवश्यकता रही है। आप बधाई के पात्र हैं कि तेवरी की तार्किक और प्रासंगिक वकालत कर रहे हैं।

सामाजिक जनक्राति को सबल बनाने, जनचेतना से जोड़ने, भूखी शोषित पीढ़ी को अपने पैरों पर खड़ा करने के लिये तेवरी-पक्ष केवल दिशानिर्देश ही नहीं, एक सार्थक मार्ग भी बन गयी है। —डॉ० दया कृष्ण विजय

वर्तमान समय में बुर्जुआ लेखन एवं बुर्जुआ पत्रकारिता के शिकार लोगों के हाथों में जब तेवरी-पक्ष जाती है, जिसमें कि कलम को चमचमाते खंजर की तरह इस्तेमाल किया गया हो (आपके ही शब्दों में) तो उन्हें काफी अचरज होता है।

—श्री विष्णु प्रसाद राजगढ़िया

पक्ष-विपक्ष सभी को स्थान देकर तथा मुख पृष्ठपर कबीर की रचना छापकर अंक को उपयोगी बनाने का श्रेयस्कर प्रयास किया है। तेवरी-पक्ष में प्रकाशित रचनाओं में पुराने रचनाकारों की गजलों की नकल यत्र-तत्र दिखायी देती है, इससे बचें। —श्री शम्भु दयाल सुधाकर

और ये भी—

आपका विवेचन बुद्धिमत्ता—योग्यतापूर्ण है, फिर भी कुछ लोग तेवरी को गजल ही मानें तो क्या करोगे ? कैसे और किस-किस से लड़ोगे ? उन्हें कैसे समझाओगे कि नयी विधाएं समय की मांगानुसार बनती रहती हैं। ऐसा न होता तो लोग आज भी 'ऋचाएं' ही रचते-पढ़ते-सराहते या सिर चढ़ाते रहते। लगातार तेवरी-सृजन-प्रकाशन से एक दिन ये शास्त्रधर महारथी इसे नयी विधा स्वीकार कर लेंगे।

पर शायद उसी दिन तेवरी का जोश भी घटने लग जाए, क्योंकि विरोध जिस प्रतिक्रिया को जन्म देता है, उसमें बहुत ऊर्जा होती है। खेद यही है कि मैं तेवरी नहीं लिख पाता अन्यथा मैं भी सक्रियता से गजल को नकारने में साथ होता।

—श्री बाबूराम वर्मा

तेवरीपक्ष-7 पृ० ५१

Scanned by CamScanner

भूख, शोषण, बेरोजगारी, अन्याय के खिलाफ कलम उठाना निश्चित रूप से प्रशंसनीय ही नहीं पूज्यनीय कार्य है इस साधना में लगे साधकों को सफलता मिले—

दमन के काफिले बढ़ते चले आते। / चमन में आदमीयत को उगाना है ॥ (उपेन्द्र)

उठ रहा है धर्म ग्रन्थों में धुआँ। / आइये फिर गढ़ें अक्षर नये ॥

हाथ काटे हैं, गला भी काट दो। / हम मगर इस ताज के आधार हैं।

इस शहर को क्या हुआ, कुछ समझ आता नहीं।

क्यों किसी भी हादिसे से, कोई घबराता नहीं ॥ (श्री राम शुक्ला राम)

कितनी सार्थक आवाज उठायी गयी है, आज के मशीनी मानव के प्रति। उसके शोषण, साम्प्रदायिकता, हड़तालों में तड़पते-२ प्राण निकल रहे हैं—

डगमगाते हैं कदम फाके के कारण और वे।/कह रहे हैं-पीके सड़कों पर बहकता कौन है ॥

शोषण और अत्याचारों को पार करके भ्रष्टाचार जब अपने चरम उत्कर्ष पर होता है—तो गरीब मजदूर क्या सोचते हैं—श्री कैलाश मनहर की ये पंक्तियाँ—

रक्त सनी है, सुबह हमारी, आग उगलती शाम।

दोपहरी को लिखा हमने इन्कलाब के नाम ॥

दूसरी ओर प्रभुदयाल सारस्वत की ये पंक्तियाँ—भूखा पेट कितनी देर संघर्ष करेगा—

कैसे तुम चट्टानों से टकराओगे ? / कैसे भूखा पेट लिये लड़ पाओगे ?

कुर्सी पर सोते प्रशासक तन्त्र बहरे और गूंगे को हो गये हैं। वे कैसे तुम्हारी आवाज सुन पाएंगे—

कुर्सी पर सोते रहते ऐसों से। / कैसे अपना देश सुधरवा पाओगे ॥

श्री विजय पाल सिंह जी की मान्यता है कि सुनहरे सपने देखने वाले निराश लोग यदि भ्रष्ट लोगों के हाथों बिक जाते, सुख सुविधाओं में डूब जाते तो आवाज कौन लगाता, क्रान्ति की मशाल कौन जलाता ?—

यदि हरियाले स्वप्न न हमको छलते यारों/'हरी घास पर क्षणभर' हम भी चलते यारों।

इस पूंजीवादी व्यवस्था में भीख माँगने से काम चलने वाला नहीं—वे गला काटने के अलावा क्या कर सकते हैं ?

मत माँगो, माँगे से कब दी छाँव खजूरों ने। / काटे ही काटे, निर्बल के पाँव हजूरों ने ॥

दयाकृष्ण विजय के इन शब्दों को उद्धृत करने के पश्चात् मैं पुनः भूख की व्याख्या में कैलाश पचौरी की भावनाओं को व्यक्त करते हुए 'तेवरी-पक्ष' परिचर्चा अंक १ की उत्कृष्टता, तेजस्विता, जोशीलेपन की पैनी जोरदार अभिव्यक्ति के लिये सभी को साधुवाद एवं धन्यवाद प्रेषित करता हूं—

सुर्ख आँखों में रतजगे होंगे। / फिर साजिशों के पर उगे होंगे ॥
जिस्म को भूख का तोहफा देकर। / वो पशेमान तो हुए—होंगे ॥
भूख और मुफलिसी तोबा-तोबा। / कुछ दरिंदे वहाँ रहे होंगे ॥

—श्री त्रिलोक शास्त्री

Scanned by CamScanner

दो तेवरियां

(एक)

जमीन चुप कि आसमान कुछ तो बोलेगा।
जमाना चुप कि वक्त आएगा तो रो लेगा।।
किवाड़ चुप कि कोई चटखनी को खोलेगा।
चटखनी चुप कि कोई खिड़कियों से बोलेगा।।
हवाएं चुप कि कोई तो उन्हें बुलाएगा।
मेघ चुप-चुप कि खुद में सूर्य को समो लेगा।।
लेखनी चुप कि कौन अग्नियों से खेलेगा।
आदमी चुप कि औरतों में जाके सो लेगा।।

(दो)

दिखती है यहाँ रात, कोई बात करें क्या ?
मिलते नहीं हैं दोस्त, मुलाकात करें क्या ?
जलती यहाँ जमीन, कहीं खो गए बादल।
ऐसे में कोई इस जगह बरसात करें क्या ?
डूबे हैं सभी लोग अब अपने खयाल में।
अब हम किसी से बोलो सवालात करें क्या ?
लड़की बड़ी सुशील है, सुन्दर है, पढ़ी है।
पर बाप है गरीब तो बारात करें क्या ?
सब सह रहे हैं जुल्मो-सितम, फिर भी सब अलग।
ऐसे में कोई संगठन बलात् करें क्या ?

—डॉ० मुकुंद बिहारी पांडेय

Scanned by CamScanner

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !
चाहे दिल्ली में गैस रिसे
या रिसे भोपाल में,
पर हम क्यों उलझें भला
इस बेहूदे सवाल में।
हमें तो हर हाल में मुस्कराना है,
बस इक्कीसवीं सदी का
मधुर संगीत सुनाना है।
इस देश की मूर्ख जनता को।
दिखाना है कम्प्यूटर का चमत्कार।

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !
चाहे भुखमरी का शिकार हो जाये
इस देश का जन—जन
चाहे आंख-आंख से बरसता रहे
दुःख दर्दों का सावन
पर गांव-गांव होना ही चाहिए
भूखों का मनोरंजन
घर-घर तक पहुँचना चाहिए
आपका यह दूरदर्शन
ताकि हर कोई सुन सके
आपके वसन्ती समाचार।

रमेशराज

—०—

Scanned by CamScanner

बुक-पोस्ट/मुद्रित सामग्री

सार्थक सृजन प्रकाशन

१५/१०९ ईशानगर, अलीगढ़ २०२००१ (उ०प्र०)

सेवा में,

श्री — ....

....

....

प्रकाशक/मुद्रक/संपादक, रमेशराज द्वारा सार्थक सृजन प्रकाशन, ईशा नगर अलीगढ़ के लिए शारदा प्रिंटर्स, सासनी गेट, अलीगढ़ से मुद्रित।

Scanned by CamScanner